ISSN-2321-3981

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

आश्विन २०८१ अक्टूबर २०२४

₹ ३०

कविता

दशहरा

– दीनदयाल शर्मा

रावण–मेघनाद–कुंभकर्ण का,
पुतला जलाते हैं हर साल।
जी उठते हैं फिर ये तीनों,
जला–जला हुए हम बेहाल।।

धू–धू कर जलते हैं तीनों,
नाचे सब जन नौ–नौ ताल।
जीत हुई है सदा सत्य की,
हारा है झूठा हर हाल।।

क्रोध कटुता कपट अहंकारी,
द्वेष दगा अन्याय अत्याचार।
रावण में थी ये सब कमियाँ,
नहीं था कोई पारावार।।

विद्वता रावण की जगजाहिर,
किया न उसका कभी भी मान।
राख हो गई स्वर्ण की नगरी,
फिर भी मिटा नहीं अभिमान।।

भीतर के रावण को मारें,
जो बैठा है पालथी मार।
फिर मनायें दशहरा घर–घर,
खुशियों का सुन्दर त्यौहार।।

– हनुमानगढ़
(राजस्थान)

सचित्र प्रेरक बाल मासिक

देवपुत्र

(विद्या भारती से सम्बद्ध)

भाद्रपद २०८१ ▪ वर्ष ४५
अक्टूबर २०२४ ▪ अंक ०४

संरक्षक
कृष्ण कुमार अष्ठाना

संपादक
गोपाल माहेश्वरी

प्रबंध संपादक
नारायण चौहान

मूल्य

एक अंक	:	३० रुपये
वार्षिक	:	२०० रुपये
पन्द्रहवर्षीय	:	२००० रुपये
सामूहिक वार्षिक	:	१५० रुपये

(कम से कम १० अंक लेने पर)

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल 'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

संपर्क
४०, संवाद नगर,
इन्दौर ४५२००१ (म. प्र.)
दूरध्वनि: (०७३१) २४००४३९

e-mail:
व्यवस्था विभाग
devputraindore@gmail.com
संपादन विभाग
editordevputra@gmail.com

अपनी बात

प्यारे भैया-बहिनो!

दुर्गा पूजा, विजयादशमी, दीपावली जैसे बड़े त्योहारों का है यह माह। दुर्गोत्सव तो हम सब मनाते हैं पर क्या यह भी जानते हैं कि दुर्गा देवी कैसे प्रकट हुई थीं? संभवत: कुछ बच्चों को पता हो। जब सारी सृष्टि को आतंक व अत्याचारों से दुखी कर देने वाले विकट राक्षसों का वध किसी भी अकेले देवता से संभव न हुआ तो परमपिता की प्रेरणा से सबने अपने-अपने तेज (शक्ति) को एकत्र किया इस संगठित शक्ति का नाम ही दुर्गा हुआ। सभी देवताओं के अस्त्र-शस्त्र धारण कर इसी दुर्गा माता ने असुरों, राक्षसों का विनाश कर सबको निर्भय बनाया।

ऐसे ही भगवान राम ने वनों में रहने वाले वानर भालुओं को संगठित कर कम से कम साधन होते हुए भी अपार साधन एवं बलशाली राक्षसराज रावण का विनाश किया।

द्वापर युग में भगवान श्रीकृष्ण ने बचपन में अपने ग्रामवासी ग्वाल बालों को एकत्रित किया और इन्द्र के क्रोध से बृज की रक्षा करने हेतु गोवर्धन उठा लिया।

इतिहास के पन्नों पर अंकित है कि महाराणा प्रताप ने भीलों की सेना बनाकर मुगलों के दाँत खट्टे कर दिए और छत्रपति शिवाजी ने सह्याद्रि के मावले गिरिवासियों को संगठित कर ऐसी 'स्वराज्य सेना' का निर्माण कर लिया कि विधर्मी सल्तनतों को नाकों चने चबवा दिए और हिन्दवी स्वराज्य की स्थापना कर दी।

दशमेश श्री गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज ने स्वधर्म की रक्षा हेतु समाज के विभिन्न वर्गों के लोगों को एकत्रकर 'खालसा' रच दिया। जिसके प्रत्येक सिख सेनानी ने अपने देश, धर्म, स्वाभिमान की रक्षा के लिए सर्वस्व भेंट करने का आदर्श स्वीकार किया।

ऐसे और भी उदाहरण हैं लेकिन सबका 'मूल मंत्र' है 'संगठन'। एक ध्येय, एक लक्ष्य, एक कार्यपद्धति, एक सुनिश्चित योजना, नेतृत्व पर अटल विश्वास रखते हुए 'संगठन में स्व का सम्पूर्ण समर्पण'। ये ही किसी भी सफल, सार्थक व समर्थ संगठन के आधारभूत तत्व हैं।

वर्ष १९२५ में विजयादशमी के दिन भी एक ऐसे ही महान संगठन का उदय हुआ जिसका नाम पड़ा 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ' संघ के संस्थापक डॉक्टर केशवराव बलिराम हेडगेवार जी ने स्वयं की इच्छा से अपना सब कुछ राष्ट्र के हित में लगा देने की भावना से ओत-प्रोत भारत-जनों के इस संगठन का बीजारोपण सौ वर्षों पहले किया था। तब से निरंतर अपनी अनेक शाखाएँ फैलाता हुआ यह संघ वृक्ष आज हजारों शाखाओं और लाखों स्वयंसेवकों के साथ सतत सघन होता जा रहा है।

संगठन के लिए संगठन, श्रेष्ठ चरित्रवान लोगों को गढ़ना जो अपने समाज, राष्ट्र व सम्पूर्ण मानवता एवं प्रकृति के भले के लिए जो कुछ भी करना पड़े करेंगे, जैसा बनना आवश्यक होगा, बनेंगे, और आवश्यकता पड़ने पर सदैव निस्वार्थ भावना से प्रस्तुत रहेंगे ऐसा कर्त्तव्य मान कर 'भारतमाता की जय' के साधकों का यह संगठन भी आदि काल से आज तक महत्वपूर्ण सिद्ध हो चुके सज्जनों के संगठन का महत्व ही बताते हैं। आओ हम भी संगठन की महत्ता को जानें और सदुद्देश्यों के लिए संगठित हों।

आपका
बड़ा भैया

web site - www.devputra.com

॥ अनुक्रमणिका ॥

कहानी

- जब गाँव में हुई रामलीला -राजा चौरसिया ०८
- उपवास का महत्त्व -तारादत्त जोशी १५
- लौट आओ राम -प्रकाश मनु १८
- श्राद्ध -नारायण चौहान २८
- निराली दीवाली -डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल ३८

आलेख

- विजयादशमी -डॉ. विजय प्रकाश त्रिपाठी १२

नाटक

- मिला मुक्ति का मार्ग -पद्मा चौगाँवकर ०५
- चार मित्र -प्रा. आनंद प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश' ४४

प्रसंग

- प्रार्थना का समय -संकलित ३६

बौद्धिक क्रीड़ा

- चित्र बनाओ -राजेश गुजर १०
- बिन्दु मिलाओ -राजेश गुजर ११
- रास्ता बताइए -चांद मोहम्मद घोसी २७
- बाल पहेलियाँ -डॉ.कमलेन्द्र कुमार श्रीवास्तव ४९

कविता

- दशहरा -दीनदयाल शर्मा ०२
- सिंघाड़ा -रामकुमार गुप्त १४
- लालबहादुर शास्त्री -मोहन उपाध्याय २३
- दीपों का त्यौहार -राजेन्द्र निशेश ३७
- हमारे बाबा -गौरी शंकर वैश्य 'विनम्र' ४७
- ज्योतिमयी हो दीवाली -डॉ. रोहिताश्व अस्थाना ५१

स्तंभ

- आपकी पाती - १४
- बाल साहित्य की धरोहर -डॉ.नागेश पाण्डेय 'संजय' २४
- लोकमाता अहिल्याबाई होळकर -अरविन्द जवळेकर ३०
- सच्चे बालवीर -रजनीकांत शुक्ल ३२
- स्वस्थ, रोगमुक्त, सन्तुष्ट और आनन्दित जीवन के सूत्र -डॉ. मनोहर भण्डारी ३४
- गोपाल का कमाल -तपेश भौमिक ३५
- छ: अँगुल मुस्कान - ३७
- पुस्तक परिचय - ४०
- मैं संघ हूँ -नारायण चौहान ४१
- शिशु महाभारत -मोहनलाल जोशी ४२

रोचक जानकारी

- चटपटा व स्वादिष्ट आलू -चांद मोहम्मद घोसी २२

चित्रकथा

- कर भला हो भला -देवांशु वत्स १७
- अदला बदली -देवांशु वत्स ३१
- दुर्घटना -संकेत गोस्वामी ४३

क्या आप देवपुत्र का शुल्क नेट बैंकिंग से जमा करा रहे हैं? तो कृपया ध्यान दें!

देवपुत्र का शुल्क इसकी प्रकाशन संस्था - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** के खाते में ही जमा कराएँ।
विवरण इस प्रकार है- खातेदार - **सरस्वती बाल कल्याण न्यास** बैंक - **स्टैट बैंक ऑफ इण्डिया, एम.वाय.एच.परिसर शाखा, इन्दौर** खाता क्रमांक-**38979903189 चालू खाता (Current Account) IFSC- SBIN0030359** राशि जमा करने के बाद जमा पर्ची को देवपुत्र के ई-मेल **ID devputraindore@gmail.com** पर अवश्य भेजिए। नेट बैंकिंग में प्रेषक के कॉलम में पहले अपना स्थान लिखें फिर **सरस्वती शिशु मंदिर** का संक्षेप लिखें तो सन्देश ठीक आता है। उदाहरण के लिए -सरस्वती शिशु मंदिर, संजीत मार्ग, मंदसौर ने देवपुत्र का शुल्क भेजा तो उन्हें प्रेषक में लिखना चाहिए - "**मन्दसौर संजीत मार्ग SSM**" आशा है सहयोग प्रदान करेंगे।

नाटक : (वाल्मीकि जयन्ती : शरदपूर्णिमा)

मिला मुक्ति का मार्ग

– पद्मा चौगांवकर

पात्र परिचय

१) भील जाति का युवा लुटेरा– रत्नाकर।
२) रत्नाकर की– पत्नी।
३) रत्नाकर के– तीन बच्चे।
(आयु १२ से १५ वर्ष)
४) तीन– ऋषिगण।

स्थान– घनघोर जंगल।

समय– दुपहर।

नेपथ्य से आवाज

यह कहानी है, भील डाकू रत्नाकर की विपाशा के किनारे घने जंगलों से निकलने वाले पथिकों को वह नित्य लूटता, धन के लिए उनका रक्त भी बहाता। परन्तु जीवन में घटित एक घटना ने उसे लुटेरे से महर्षि बना दिया। प्रस्तुत है नाट्य रूप–

तीन ऋषिगण रामनाम का जाप करते हुए वन खंड की राह निकल रहे हैं। अचानक सामने आ खड़ा होता है– रत्नाकर, गठीले शरीर का आदिवासी युवक, गले में मणिमालाएँ हाथ में फरसा और कमर में रस्सी का लपेटा।

रत्नाकर– रुको!

ऋषिगण (चौंककर)– तुम कौन? कौन हो तुम?

रत्नाकर– मैं कौन हूँ, यह जानकर क्या करोगे? यह पूछो कि मैं क्या चाहता हूँ।

ऋषि– हाँ–हाँ वही! बोलो, तुम चाहते क्या हो?

रत्नाकर– धन! तुम्हारा सारा धन! तुम्हारे पास जो कुछ भी है, निकालो चुपचाप।

एक ऋषि– हमारे पास कोई धन–संपदा नहीं। राम–भक्ति ही हमारा धन है, सत्कर्म हमारी पूंजी। इसे तुम क्या कोई भी हमसे छीन नहीं सकता।

रत्नाकर– धन–सम्पदा के अतिरिक्त मुझे कुछ चाहिए भी नहीं। घमंडी साधुओं, बातें मत बनाओ। जो धन छुपाकर ले जा रहे हो, सीधी तरह निकालो, नहीं तो मृत्यु को गले लगाने के लिए तैयार हो जाओ। धन तो मैं तुम्हें मारकर भी प्राप्त कर सकता हूँ। देख रहे हो यह फरसा?

ऋषि– हम संत हैं बालक, कम से कम आवश्यकताओं के साथ, जीवन–यापन करते हैं। धन संग्रह हम करते नहीं! इस कमंडल और भिक्षा पात्र के अतिरिक्त हमारे पास, केवल पहनने–ओढ़ने के वस्त्र भर हैं। चाहो तो देख लो।

(खीजकर, रत्नाकर, उनके झोलों, पोटलियों की तलाशी लेता है।)

दूसरा ऋषि– बालक! ये लूट और हत्याएँ तुम किस प्रयोजन से करते हो?

रत्नाकर– किसलिए? किसके लिए? (क्रूर हँसी हँसता है।) अपने सुख के लिए परिवार को पालने के लिए। मैं पथिकों को लूटता हूँ। लूट के धन से अपने बच्चों और पत्नी को सुखमय जीवन का आनंद देता हूँ। सुख साधन जुटाने का यह मार्ग सरल भी है और मेरे लिए आनंददायी भी।

पहला ऋषि– परंतु इस तरह तो तुम पाप के भागी बनोगे। इस पाप कर्म के बुरे परिणाम तुम्हें भोगने होंगे।

रत्नाकर– हो सकता है, इन पाप कर्मों के परिणाम बुरे होंगे। परन्तु मुझे इसमें आनंद आता है। और फिर यह सब कुछ मैं अपने परिवार के लिए ही तो करता हूँ।

ऋषि– क्या तुमने कभी अपने परिवार से इस संबंध में बात की है? वे सब तुम्हारे लूट के धन का उपभोग करते हैं, क्या वे तुम्हारे 'पाप' में सहभागी

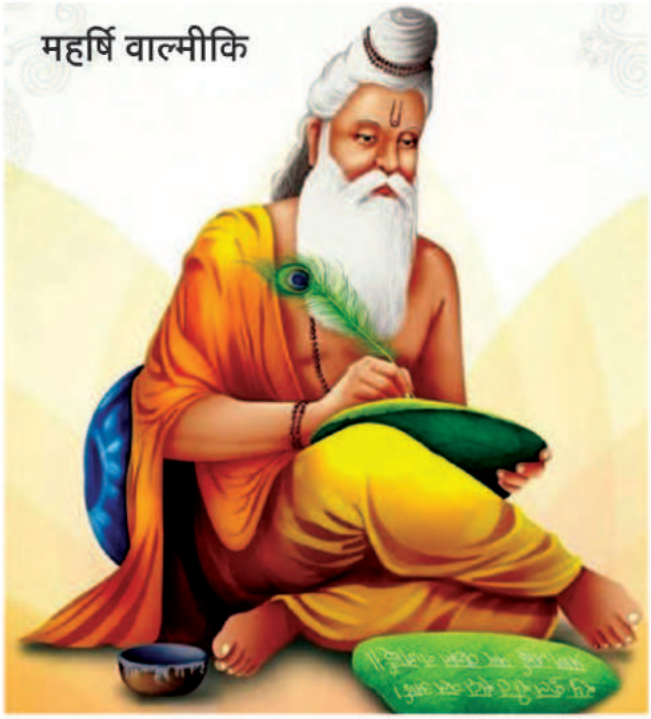

हैं?

रत्नाकर– साधुओ! इसमें मुझे कोई शंका नहीं! वे भी इस 'पापधन' का उपभोग करते हैं, तो सहर्ष मेरे साथ 'पाप भागी' होंगे ही।

पहला ऋषि– इस संबंध में तुम्हें उनसे बात करनी चाहिए। कहीं, तुम्हें अकेले ही इस घनघोर पाप को ढोना ना पड़े। मृत्यु के बाद मुक्ति भी न मिले।

रत्नाकर– (उसका स्वर कुछ कोमल पड़ जाता है।) मुझे दुविधा में डालकर, घर भेजना चाहते हो। ताकि अवसर पाकर, मेरी पकड़ से दूर भाग निकलो।

ऋषि– ऐसा नहीं है वत्स! तुम निश्चिंत होकर घर जाओ। हम यहीं रुककर तुम्हारी प्रतीक्षा करेंगे। हमारा विश्वास करो।

रत्नाकर– तुम तीनों बातों से भले लगते हो और न जाने क्यों मैं तुम्हारी कही बात को जाँचना चाहता हूँ। लूट के इस धंधे में मैं विश्वास किसी पर नहीं करता। चलो, तीनों इस पीपल से सटकर खड़े हो जाओ।

(कमर में लिपटी रस्सी निकालकर तीनों को पेड़ से बाँध देता है।)

रत्नाकर के घर का दृश्य (घर में बच्चे और पत्नी)

एक बालक– बापा! आज हमारे लिए क्या लेकर आए?

रत्नाकर– कुछ भी नहीं, खाली हाथ आया हूँ।

दूसरा बालक– खाली हाथ क्यों बापा? कोई पथिक शिकार नहीं मिला?

रत्नाकर– पथिक मिले भी तो साधु–संत। उनके पास कोई धन नहीं था।

पत्नी– ओह! आज तुम्हें साधु संतों के दर्शन हुए। उनके तो दर्शनों से ही सारे पाप धुल जाते हैं।

रत्नाकर– हाँ पाप पर से याद आया। बताओ, मैं जो दिन–रात पापकर्म कर रहा हूँ, लूट और मारकाट करता हूँ, तुम भी मेरे पाप के भागी हो ना?

पत्नी– पाप में भागी कैसे? मैंने तो पहले भी कहा है, मुझे यह सब नहीं सुहाता। पर तुम हो कि और कुछ करना नहीं चाहते। हम विवश तुम्हारे आश्रित हैं।

जैसी कमाई से तुम हमारा भरण–पोषण करना चाहोगे हमें करना होगा।

रत्नाकर– (क्रोधावेश में) तुम कहना क्या चाहती हो?

पत्नी (दृढ़ स्वर में)– यही कि हम विवश हैं, तुम चाहोगे वैसा जीवन हमें जीना होगा।

रत्नाकर– यानि तुम मेरे साथ नहीं हो। कुछ भी कहो, पर मेरे बालक मेरा साथ अवश्य देंगे। मैं उनकी प्रत्येक इच्छा पूरी करता हूँ।

बालको! तुम तो मेरे साथ हो न? बुरे कामों का, यदि भगवान मुझे, दण्ड दे तो तुम मेरे साथ मेरे पाप के भागी तो बनोगे न?

दूसरा बालक– बापा! हम पाप के भागी कैसे होंगे? हम तो यह भी नहीं जानते– तुम क्या पाप करते हो?

(रत्नाकर माथे पर हाथ रखकर हताश बैठ जाता है।) (दुखी स्वर में स्वयं से बात) साधु–संतों ने ठीक ही कहा था मैं दिन–रात परिश्रम करता हूँ। भले

ही मेरा कर्म अच्छा नहीं पर कुटुंब के लिए ही तो, सब कुछ करता हूँ... पर मेरे साथ कोई नहीं। ओह, मैं अकेला ही पापी हूँ.... अकेला महापापी!

पत्नी– सुनो! तुम इस तरह दुखी न हो। पाप के इस दलदल से निकलने के लिए मुक्ति के लिए, हमें उन साधु–संतों से उपाय पूछना होगा।

(रत्नाकर उठकर जंगल की ओर जाता है, दौड़कर ऋषियों के पैरों पर गिरता है उन्हें बंधन मुक्त करता है।)

रत्नाकर– मुनिजनो! मुझे क्षमा करें! पापी केवल मैं हूँ। कुटुंब में मेरे पापों का भागी कोई नहीं। आपने मेरी आँखें खोल दी। अब आप ही मुझे मुक्ति का मार्ग दिखाएँ।

ऋषि– वत्स! लगता है, तुम्हें अपने किए का घोर पश्चाताप है। हिंसा और पापधन के लोभ का त्याग कर राम नाम का जाप करो। रामजी तुम्हारा बेड़ा पार करेंगे। बोलो– राम..... राम.... श्री. राम।

रत्नाकर– (आँखों में आँसू, राम कहना चाहता है पर मुख से 'मरा' 'मरा' शब्द निकलते हैं।)

मैं पापी मैं पापी मेरे मुख से भगवान का नाम भी नहीं निकल रहा। (क्रंदन करता है।)

ऋषि– बोलते रहो, इसी प्रकार, स्वभाव के अनुसार, तुम्हारे मुख से 'मरा' 'मरा' शब्द निकलते हैं जब तुम राम नाम में लीन हो जाओगे। शब्द स्वत: बदल जाएँगे। तुम राम नाम धन पाकर 'धनवान' बन जाओगे।

अंतिम दृश्य (नेपथ्य से स्वर)– रत्नाकर तपस्या में लीन है। वर्षों की तपस्या से उसकी देह पर मिट्टी का अंबार है। दीमकों ने अपने घर बना लिए हैं। वाल्मीकों के बिलों के कारण रत्नाकर का नाम पड़ा 'महर्षि वाल्मीकि' जिन्होंने महान ग्रंथ रामायण (संस्कृत) की रचना की।

– गंज बासौदा
(मध्यप्रदेश)

जब गाँव में हुई रामलीला

– राजा चौरसिया

दशहरा आने में लगभग एक माह का समय था। इसके बाद भी किशोरावस्था में पहुँच रहा भरत अभी से बेहद आकुल-व्याकुल था। चिड़ियों की तरह चंचल और तितलियों की तरह चपल होने के कारण उसकी अकुलाहट वह रोजाना अपनी मित्र मंडली के साथ रामलीला की मंडली के सभी मंचीय कार्यक्रम लगातार देखा करता था।

भगवान श्रीराम के जन्मोत्सव से लंकापति रावण के वध के पश्चात् उसके पुतला-दहन के दृश्य बहुत ही चाव एवं लगाव से देखकर रोमांचित भी हो जाता था।

प्रतिवर्ष कोई नई मंडली ही आती थी। अत: समस्त ग्रामवासी पूरे दस दिन तक नए पात्रों के अभिनय को बड़े गौर से देखा करते थे। पुरानी परंपरा के अनुसार मंच-संचालक मर्यादाओं को ध्यान में अवश्य धरता था। इसलिए स्वस्थ मनोरंजन के उद्देश्य से विदूषक अपनी सीमा का उल्लंघन नहीं करता था।

एक सुखद आश्चर्य की बात यह कि ढोलक बजाने वाले की जोड़ी के रूप में गवैया तो रहता ही था, लेकिन नचैया कभी नहीं रहता था।

भरत को उत्सुकता के चलते उसे अपने अनुभव के खजाने और सयाने दादाजी के गंभीर स्वभाव पर अचरज होने लगती थी। उनकी बुद्धि का लोहा मानते हुए प्राय: सभी गँवई लोग उन्हें बड़कू दादा कहकर उनकी बड़ाई करना कभी नहीं भूलते थे। वे कभी भी पटर-पटर न कर 'सौ सुनार की तो एक लौहार की' कहावत चरितार्थ करते थे।

''क्यों दादाजी! गाँव में होने वाली रामलीला के बारे में आप मौन धारण क्यों किए रहते हैं? आप कार्यक्रम देखने कभी-कभार ही जाते हैं। इसका कारण आप मुझे भी नहीं बताते हैं। आखिर बात क्या है?''

भरत के दादाजी कुछ देर तक तो अपने मुँह में दही जमाए रहे, फिर मुस्कुराते हुए बोले- ''पुत्तर! रामलीला तो गाँव के इतने सारे लोग खूब देखते हैं, अपने घरों में तुलसीदास जी की रामायण भी पढ़ते हैं, लेकिन क्या कभी रामचरित से प्रेरणाएँ ग्रहण करते हैं? रामलीला यदि मात्र तमाशा है तो वह पानी में बताशा है। नदी किनारे घोंघा प्यासा है। कुछ विराम के बाद- ''श्रीराम के महापराक्रम की महाविजय से कुछ भी न सीखना गठियावाती पिछड़ापन है। अवसर आने पर यदि मैंने लोगों के अंदर के बंद कपाट खोलने का प्रयास नहीं किया तो मुझे कुछ भी कह डालना।''

इतना सुनते ही भरत दंग रह गया। ऐसी सौ टंच

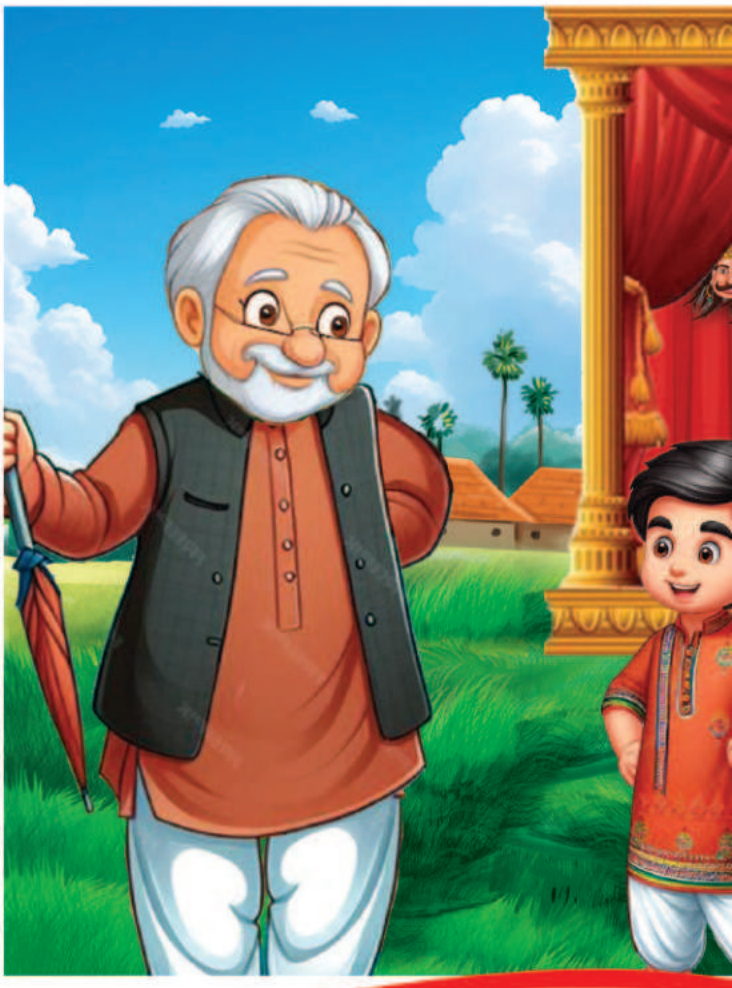

खरी सच्चाई कहने को तैयार गाँव भर में कोई नहीं समझ में आ रहा था। वह मन ही मन बोला– ''पिछड़े लोगों के तन पर चोट करने से अधिक आवश्यक है मन पर चोट करना।''

''अरे वाह मेरे दद्दू जी! सभी लोग अपने घरों में भी प्रभु श्रीराम जी की आरती उतारते हैं लेकिन उनकी वीरता की लीलाओं को अपने हृदय में नहीं उतारते हैं।'' बस इतना कहकर भरत अपने मित्रों के पास पहुँच गया।

उसने यह बात ज्यों ही सुनाई, त्योंही माखन लाल कुछ प्रभावित होकर बोला– ''तुम्हारे दादाजी की सोच तो वास्तव में बहुत ही विचारणीय है। अयोध्या के श्रीराम का नाम तो सभी जानते हैं, उनके गुणों को बखानते हैं, पर उन्हें अपनाने की बात भूल जाते हैं। सभी बड़ों की देखा देखी का हम बच्चों पर भी परिणाम होता है।''

''सुनो जी! नासमझी वाली समस्या के इस पुराने ताले की चाबी केवल तुम्हारे दादाजी के पास ही हो सकती है। अपने माता–पिता की आज्ञा का पालन कर चौदह वर्ष तक वनवास झेलने वाले श्रीराम का अर्थ न जानना भयंकर भूल है।'' ज्ञानचंद ने अपना यह विचार सुनाते ही यह पूछ लिया– ''आखिर वह घड़ी कब आएगी, जो भटके हुए ग्रामवासियों की दशा को दिशा दिखाएगी?''

पहले की तरह बहुत दूर से आई रामलीला मंडली का कार्यक्रम शुरू हो गया था। श्रीराम, भरत, विभीषण और हनुमान आदि के पात्र अपने अभिनय खूब साज–बाज के साथ मंच पर प्रस्तुत कर रहे थे। सीताजी का पात्र भी प्रभावशाली था, लेकिन मंडली का मालिक संतुष्ट नहीं था। उसकी आमदनी ऊँट के मुँह में जीरा जैसी लग रही थी। जब दशहरे के मात्र कुछ दिन ही बचे तब उसने तरकीब निकालते हुए गाँव की कमेटी से पूछकर लंबी कमाई की गरज से यह घोषणा कर दी– ''धर्म प्रेमी भाइयो। आप लोगों के भरपूर मनोरंजन के लिए एक दो दिन में अप्सरा जैसा सुंदर नचैया आने वाला है।''

यह खुशखबरी चहुँओर हवा–पानी की तरह फैल गई। ''अरे वाह! अपने गाँव में पहली बार बढ़िया नचैया आया। खूब मजेदार एवं रिझाऊ नखरे दिखाएगा।'' इस समाचार से बच्चों से लेकर बूढ़े तक खुशी के मारे फूले नहीं समा रहे थे।

दूसरे दिन साँझ में ही उस नचैये के आने की सूचना आई। अन्य कई गाँवों तक में यह खुशखबरी पहुँच गयी। दूसरी ओर भरत के दादाजी का क्रोध भड़क उठा।– ''आज रात मैं देखूँगा कि पाप का घड़ा कैसे भरा रह सकता है?''

रात की शुरुआत से ही रामलीला के मैदान की ओर भीड़ उमड़ने लगी। बाद में इतनी भीड़ हुई कि बैठने की जगह नहीं बची। खड़े रहने वाले लोगों की संख्या इतनी सघन हो गई कि यदि ऊपर से सिक्के

फेंके जाएँ तो धरती पर न गिर पाएँ।

इस बार विशेष गाने-बजाने के साथ रामलीला शुरू हुई। अकल से बड़ी भैंस मानने वाले केवल नचैया के लिए टूट पड़े थे। पहला कार्यक्रम छलिया रावण द्वारा सीता-हरण का था। सीता का पात्र हरण होते ही फूट-फूटकर रोने लगा। वह बिल्कुल सीता की तरह ही जोरों से बिलखता रहा लेकिन दर्शकों में सन्नाटा ही छाया रहा। पुरस्कार के रूप में सीता को कौड़ी तक नहीं मिली।

अब ज्यों ही मंच पर नचैया आया त्यों ही सब बेहद प्रसन्न हुए। नाच-गाना समाप्त होने से पहले ही बहुत नोट बरस गए। कई टुटपुँजियों ने भी खूब पैसे दिए थे।

नचैया के लिए मरी जा रही उस भेड़चाल की भीड़ को यह पता नहीं चल पाया कि झबरी-चितकबरी मूँछ वाले बड़कू दादा भीड़ को चीरते हुए मंच पर अचानक कैसे पहुँच गए।

मंडली के मुखिया से अनुमति लेकर दादा जी ने बड़े दबंग ढंग से माइक पकड़कर गरजना शुरू कर दिया- ''आज इस नौटंकी की छाप नाच पर आप लोग अति प्रसन्न हुए। धर्म के बीच यह शर्म की बात है कि बहुत विलाप करती सीता पर आपको तरस नहीं आया, किन्तु नचैये पर खुश होकर खूब पैसा बरसाया। पूरे चौदह बरस तक वनवासी रहे श्रीराम ने धन-साधन की कमी रहने पर भी रावण जैसे महाबली का वध किया। सत्य की शक्ति से असंभव को भी संभव कर दिखाया। भरत जैसे भाई और हनुमान जैसे जुझारू महावीर से आप लोगों ने कुछ भी नहीं सीखा। सभी पात्रों से श्रेष्ठ नचैया ? अंदर के बंद कपाट खोल कर नई पीढ़ी के भी भविष्य को बचाना है। हमें भी अपनी मातृभूमि को मात्र भूमि मानकर श्रीराम जी के उदाहरण को आचरण में उतारना है।''

ऐसा पहली बार सुनकर लोगों में हृदय-परिवर्तन की लहर स्वाभाविक थी। सभी ने ठान लिया कि अब आगे ऐसी भारी गलती कभी नहीं होगी, जय श्रीराम।

इतना अकल्पनीय प्रभाव देखकर भरत ने सुबह दादाजी के चरणों के सामने लौटकर गर्व के साथ हर्ष व्यक्त किया था।

- कटनी (म. प्र.)

चित्र बनाओ

- राजेश गुजर

बच्चो! तोते का चित्र आसानी से बनाओ। रंग भरो।

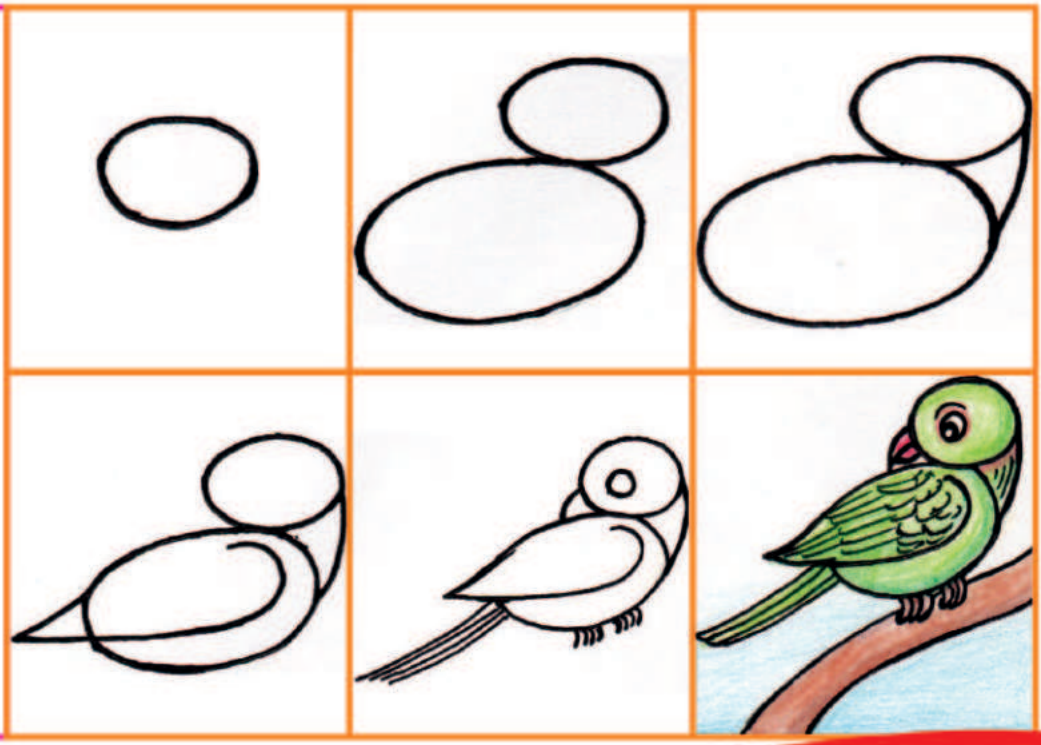

बिन्दु मिलाओ, चित्र पूरा करो

– राजेश गुजर,
खरगोन (म. प्र.)

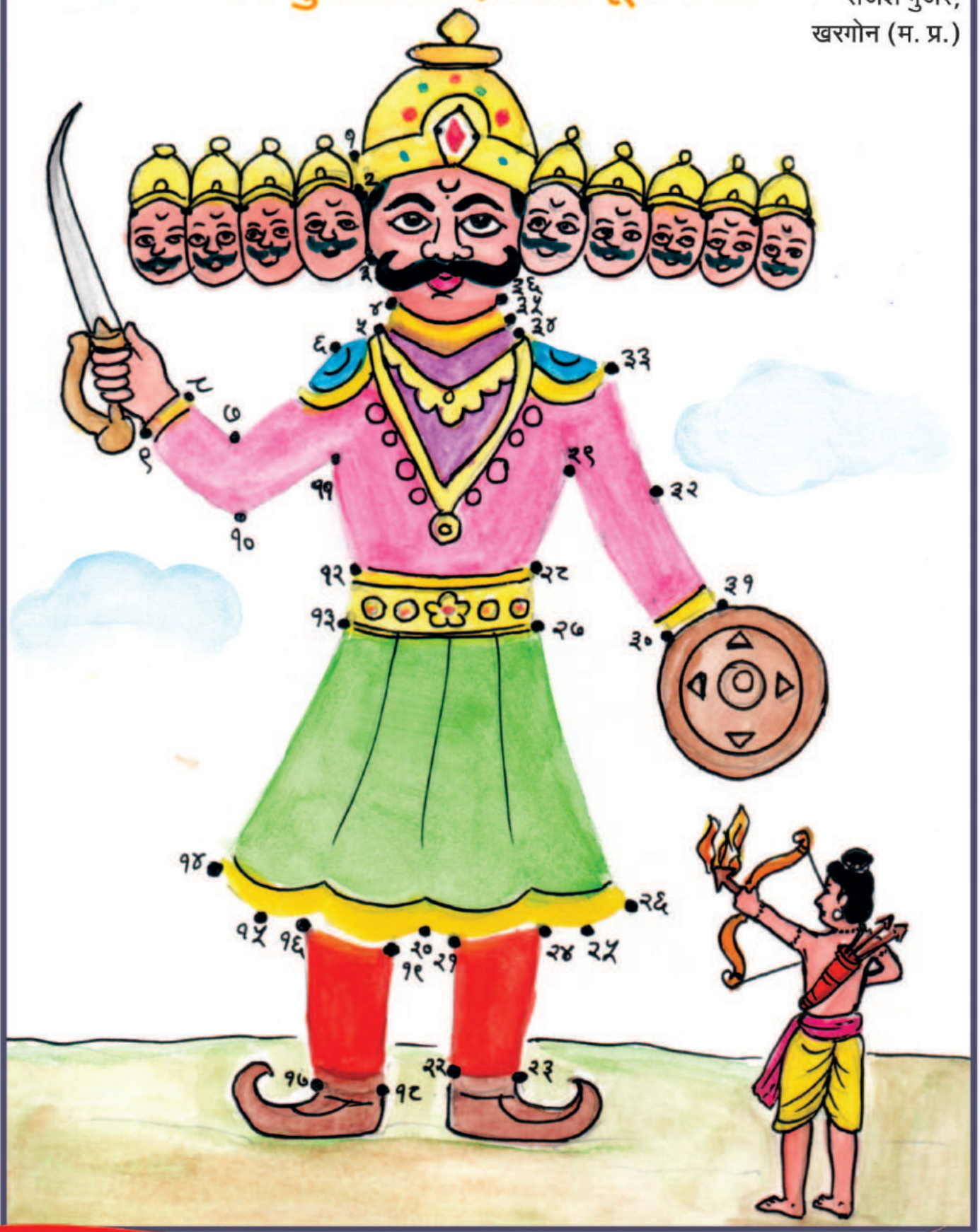

विजयादशमी

– डॉ. विजयप्रकाश त्रिपाठी

आश्विन शब्द 'अश्व' से बना है। 'अश्व' वीरभाव का प्रतीक है। आश्विन अर्थात् जिनके पास अश्व हैं, घुड़सवार हैं। यही प्रसिद्ध है। 'शुक्ल पक्ष' का तात्पर्य विशुद्ध धर्मानुकूल आचरण निभाने का पक्ष। दशमी अर्थात् देशों का शमन और दमन करने वाली। अतएव आश्विन शुक्ल दशमी का भाव हुआ– शुद्ध धार्मिक पक्ष को लेकर अनेकानेक शत्रुओं का दमन करने वाले सुवीरों को विजय प्राप्त कराने वाली विजयादशमी। सत्य का आश्रय लेकर पाशविक शक्तियों का दमन करने वाले को ही विजय मिलती है। इसीलिए इसे 'विजय का उत्सव' कहा जाता है।

अपने भारत के महाराष्ट्र प्रान्त में सीमोल्लंघन की एक परम्परा है। इस दिन युवक घर से बाहर जाकर 'शमी' वृक्ष के पत्ते लाते हैं और मित्र वर्ग में वितरित कर देते हैं। यह इस तथ्य का द्योतक है कि प्राचीन काल में इस दिन युवक अपने राष्ट्र की सीमा के बाहर जाकर दुश्मनों को पराजित कर, उनके स्वर्ण–आभूषण लाकर अपने मित्र–मण्डली में वितरित कर देते थे। दुश्मनों को परास्त कर उनसे प्राप्त धन मात्र अपने उपभोग के लिए न रखकर अन्य लोगों में वितरण करना तथा इससे सात्विक सुख की प्राप्ति करना एवं सुख–समृद्धि का वितरण करना। विजयादशमी का पर्व, हिन्दू धर्म में इसी तत्त्व का स्मरण कराता है।

हिन्दू–धर्म में विजयादशमी के पूर्व नवरात्र का उत्सव मनाया जाता है। इन दिनों अखण्ड नन्दादीप जलाने की परम्परा है। इस दीप द्वारा परस्पर स्नेहभाव दिखाने वाला तेल, स्नेह की बाती, जो कि अनेक तन्तुओं से निर्मित होती है, वह संगठन का भाव प्रदर्शित करती है। हम सभी परस्पर स्नेह के आकर्षण में बँधकर संगठित हों और हमारा प्रकाश काली रात्रि जैसे विकराल अंधकार को दूर भगाकर ज्ञान का प्रकाश सर्वत्र प्रकाशित करे। राष्ट्र–जीवन को स्नेह, संगठन और अपने जीवन को संगठन, स्नेहभाव से अपने जीवन का तिल–तिल विसर्जन कर, प्रकाश का लोक में वितरण कर सम्पूर्ण विश्व में अज्ञान के अंधकार को विदा कर दें।

इसी विजयादशमी के पावन पर्व पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की वर्ष १९२५ में डॉ. केशवराव बलिराम हेडगेवार जी ने नागपुर में स्थापना की थी। डॉ. हेडगेवार १९वीं शताब्दी के एक महान मनीषी, चिन्तक–विचारक थे। उन्होंने स्वयं में अनुभव किया कि भारत राष्ट्र के इस जर्जर भवन को रक्षित करने के लिए कोई आगे नहीं आ रहा। इस समाज की दुरावस्था को सुदृढ़ता प्रदान करने हेतु यदि कुछ लोग आगे आते भी हैं तो उनमें अहंकार उत्पन्न हो जाता है कि हम ही इस कार्य हेतु आगे आए हैं और समाज में उपकार कर रहे हैं। अनेक बार आपसी मतभेदों के कारण उनमें उत्साह की कमी भी आ जाती है, फिर वे

असहाय होकर बैठ जाते हैं। इन्हीं तथ्यों का निरीक्षण कर, उन पर विचार करने के पश्चात् डॉक्टर हेडगेवार जी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की थी। इसी संघ–संगठन के माध्यम से ऐसे लोगों का निर्माण किया जो भारत राष्ट्र और देश–कार्य को अपना कार्य समझकर करते हैं।

समाज के ऋण को चुकाना अपना पुनीत कर्त्तव्य मानते हैं। इस कर्त्तव्य भावना से अहंकार का जन्म नहीं होता। स्नेह भाव से मिल–जुलकर, कंधे से कंधा मिलाकर अपना कार्य करना है। इस कारण भेदभाव उत्पन्न ही नहीं होता। समाज की अवस्था तथा उसकी सतत् सेवा की सुदृढ़ भावना निराशा का जन्म ही नहीं होने देती। यही है डॉ. हेडगेवार जी के निरन्तर शुभ–चिन्तन का परिणाम।

अपना देश भारत कई दशकों से निराशा के भँवरजाल में फँसकर अंधकार पूर्ण जीवन जी रहा था। परस्पर स्नेह और संगठन का पूर्ण अभाव था। विदेशी आक्रान्ताओं के अत्याचार से भारतवासी निराशामयी जीवन जी रहे थे। इस दयनीय अवस्था से निकालकर भारत को उसके गत वैभवपूर्ण सम्माननीय स्थान पर प्रतिष्ठित करने के लिए डॉ. हेडगेवार ने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया। समस्त सुख–सुविधाएँ, निजी जीवन एवं पारिवारिक स्नेह बंधनों को छोड़कर केवल देश–सेवा की अहर्निश सेवा भावना से काम करते–करते उन्होंने सम्पूर्ण जीवन इसी में खपा दिया। जब डॉक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण की और उनके प्रधानाचार्यजी ने डॉ. हेडगेवार जी को एक जगह नौकरी दिलाने का सुझाव दिया तो उन्होंने विनम्रतापूर्वक उसे मना कर दिया। उनका स्पष्ट कथन था– ''मेरे जीवन की दिशा देश–सेवा ही है।''

भारत में उस समय काँग्रेस एवं क्राँतिकारियों के संगठन आन्दोलन चला रहे थे। डॉ. साहब ने दोनों संगठनों से जुड़कर देश के लिए सक्रिय भूमिका

निभाई। उनका निर्णय था कि सशस्त्र क्राँति से स्वतंत्रता नहीं मिल पाएगी और यह मार्ग सामान्य वर्ग द्वारा नहीं अपनाया जा सकता। काँग्रेस की तुष्टिकरण की नीति के अनेक दुष्परिणाम सामने आ गए थे। देश के प्रति अपनत्व के भाव कुछ वर्ग में जाग्रत ही नहीं हुए वे तो सौदेबाजी पर उतरे हुए थे। ऐसा अनुभव करने पर डॉ. हेडगेवार जी ने आन्दोलनों से अपने को अलग कर लिया और आखिर में नि:स्वार्थ, अनुशासित, समर्पित राष्ट्रभक्तों की टोलियों के निर्माण हेतु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की पुण्य स्थापना की।

'त्वदीयाय कार्याय बद्धा कटीयम्' के भावसूत्र से बँधकर, धर्म अनुकूल कार्य करते हुए, अत्याचारियों का दमन करने वाले वीरों के दल के दल नि:स्वार्थ भाव से राष्ट्र और समाज–सेवा के लिए निकलें– इसलिए विजयादशमी के पावन पर्व पर आज से सौ वर्ष पूर्व डॉ. हेडगेवार जी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की आधारशिला रखी।

– कानपुर
(उत्तर प्रदेश)

कविता

सिंघाड़ा

– रामकुमार गुप्त

समय सिंघाड़ों का आया।
देख-देख जी ललचाया।।
सजे गुलाबी-हरे-हरे।
मीठे जैसे दूध भरे।।
खूब मुलायम हैं कच्चे।
खुश होकर खाते बच्चे।।
जब बनती है तरकारी।
लगती है कितनी प्यारी।।
पके उबाले जायेंगे।
चटनी के सँग खायेंगे।।
माता इसे सुखाती हैं।
आटा, पीस बनाती हैं।।

व्रत में पूरी या हलुआ।
बनता इसका माल पुआ।।
मजेदार है इसका स्वाद।
रहे हमेशा सबको याद।।

– खीरी (उ. प्र.)

केवल किताब ही नहीं,
ज्ञान का भंडार है देवपुत्र।
कहानी और कविता ही नहीं,
सीख और अनुभव का शृंगार है देवपुत्र।।
केवल कहानियाँ ही नहीं,
उसमें छिपी सीख है देवपुत्र।
मिश्री की डली ही नहीं,
ज्ञान और अनुभव की ईख है देवपुत्र।।
केवल एक मोती ही नहीं,
सीख की माला है देवपुत्र।
केवल किताब ही नहीं,
हमारी शाला है देवपुत्र।।
ओस की एक बूँद नहीं,
खुशियों की बरखा है देवपुत्र।
बच्चों की ही नहीं,
बड़ों की भी सखा है देवपुत्र।।
केवल मान ही नहीं,
हमारा सम्मान है देवपुत्र।
इसलिए ही तो कहते है,
देश की शान है देवपुत्र।।

– गौरी जामड़ा

इस बार के अंक में तीन कविताएँ बहुत ही अच्छी हैं विहास (पोते) के लिए मैंने उनको रिकॉर्ड किया है। इस अंक के लिए आपको हार्दिक अभिनंदन।

– डॉ. स्मिता भवालकर (उज्जैन)

उपवास का महत्व

– तारादत्त जोशी

शारदीय नवरात्र का पहला दिन था। विज्ञान के आचार्य जी ने कक्षा में प्रवेश किया। सभी बच्चों ने खड़े होकर आचार्य जी का अभिवादन किया। आचार्य जी बच्चों को नवरात्र की शुभकामनाएँ देकर नवरात्र के महत्व और शक्ति की उपासना के बारे में बता रहे थे कि किस प्रकार शक्तिस्वरूपा देवी ने राक्षसों का संहार किया।

अभी उद्‌बोधन चल ही रहा था कि दुर्गा ने खड़े होकर प्रश्न किया– ''आचार्य जी! मुझे कल दादी जी ने बताया कि ब्रह्माजी के कान के मैल से मधु और कैटभ नामक दो राक्षस पैदा हो गये और फिर वे दोनों उनको मारने को गये। ऐसा कैसे हो सकता है? मैल से राक्षस कैसे उत्पन्न हो सकते हैं?''

आचार्य जी ने कहा– ''दुर्गा! दादाजी ने आपको सही बताया। आपने कहा कि मैल से राक्षस कैसे उत्पन्न हो सकते हैं? राक्षस तो मैल से ही उत्पन्न होते हैं। जब हम स्वच्छता को नहीं अपनाते हैं तो गंदगी फैलती है और गंदगी से बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं और बीमारियाँ हमारे जीवन शक्ति को क्षीण करती हैं और मृत्यु कारण भी बन जाती हैं। जो दादी ने बताया वह मैल उत्पन्न होने वाले राक्षस और कुछ नहीं बल्कि बीमारियाँ ही थी। यह मैल भी दो प्रकार का होता है। एक तो शारीरिक मैल है जिससे शारीरिक बीमारी रूपी राक्षस होते हैं और दूसरा मन का मैल है। जिससे मानसिक बीमारी फैलती हैं।

''ओह.... हाँ! लेकिन बीमारियों से लड़ने में दैवीय शक्ति कैसे सहायता करती है?'' दुर्गा ने फिर प्रश्न किया।

''हमारे शरीर में विद्यमान जीवनी शक्ति ही दैवीय शक्ति है। जो रोगों से लड़कर शरीर को स्वस्थ रखती है। इस जीवनी शक्ति का निर्माण उचित आहार से होता है। आहार से रक्त और मज्जा का निर्माण होता है। रक्त में उपस्थित लाल रक्त कण शरीर की प्रत्येक कोशिका तक प्राण वायु का संचार करते हैं। श्वेत रक्त कण रोगों से लड़ने में शरीर की सहायता करते हैं। इन कणों को शरीर के

रक्षक सिपाही भी कहते हैं। एक अन्य प्रकार के कण शरीर में घावों को भरने में सहायता करते हैं। इन्हें बिम्बाणु कहते हैं। इस प्रकार रक्त से शरीर में शक्ति का संचार होता है। यही शक्ति हमारे शरीर की रक्षा करती है। इसी को हम ऊर्जा कहते हैं। जब हम इस शक्ति का प्रयोग परोपकार के लिए करते हैं तो यह दैवीय शक्ति कहलाती है और जब इसका प्रयोग गलत कार्यों और दूसरों को सताने में करते हैं तो यह आसुरी शक्ति बन जाती है। दुर्गा अब तो आप समझ गयी होंगी कि मैल से कैसे राक्षस उत्पन्न हो सकते हैं।''

दुर्गा ने हाँ में सिर हिलाया। तभी गौरी खड़ी होकर बोली– ''आचार्य जी! मैं भी कुछ पूछना चाहती हूँ।''

आचार्य जी ने गौरी का उत्साह बढ़ाते हुए कहा– ''हाँ–हाँ अवश्य पूछो।''

गौरी बोली– ''आचार्य जी! आपने बताया कि उचित आहार से हमारी जीवनी शक्ति का निर्माण होता है। लेकिन लोग नवरात्र में और अन्य अवसरों पर उपवास क्यों रखते हैं? क्या उपवास लेना उचित है?''

आचार्य जी ने कहा– ''गौरी आपने बहुत ही अच्छा प्रश्न किया है। मैं आज इसी बारे में बात करना चाहता था। उपवास तो शरीर के लिए बहुत ही लाभदायक है। अब तो वैज्ञानिकों ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि हम उपवास से अनेक रोगों का उपचार कर सकते हैं।

पहली बात तो यह है हमारा शरीर एक मशीन यानी यंत्र की तरह कार्य करता है। जब हम उपवास लेते हैं तो हमारे पाचन तंत्र को आराम मिलता है। जिससे पाचन क्रिया दुरुस्त होती है और शरीर स्वस्थ रहता है। साथ ही उपवास लेने से शरीर के भीतर अनेक दूषित पदार्थ समाप्त हो जाते हैं। जिससे रोग उत्पन्न होने का खतरा कम हो जाता है।

दूसरा जब हम उपवास रखते हैं तो हमारे मन में शांति रहती है। जिससे तनाव नहीं होता है और तनाव कम होने से मानसिक रोग उत्पन्न ही नहीं होते हैं। उपवास से मानसिक एकाग्रता बढ़ती है। किन्तु हमेशा स्वस्थ व्यक्ति को ही लेना चाहिए। किसी प्रकार की शारीरिक समस्या होने पर उपवास नहीं रखना चाहिए। और हाँ! बहुत से लोग उपवास के दिन, दिन भर कभी चाय, कभी दूध, कभी फलाहार कर सामान्य दिनों से भी अधिक आहार लेते हैं। ऐसे उपवास का भी कोई लाभ नहीं है।

''आचार्य जी! उपवास के द्वारा रोगों का उपचार कैसे होता है?'' शिव ने जिज्ञासा प्रकट की।

''जब हम उपवास रखते हैं तो शरीर की स्वस्थ कोशिकाएँ अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बीमार और क्षतिग्रस्त कोशिकाओं और दूषकों का भक्षण कर लेती है। जिससे रोग उत्पन्न होने वाले विकार नष्ट हो जाते हैं। उपवास पद्धति से शरीर के जटिल रोगों से भी मुक्ति पाई जा सकती है। स्वस्थ कोशिकाओं द्वारा बीमार कोशिकाओं के भक्षण की इस प्रक्रिया को 'आटोफैगी' नाम दिया गया है। जिसका आशय है, स्वत: भक्षण। अर्थात् स्वस्थ कोशिकाओं द्वारा मृत और क्षतिग्रस्त कोशिकाओं का भक्षण। उपवास से अल्जाइमर, डिमेंशिया, मधुमेह तथा कैंसर जैसे रोगों से बचा सकता है।''

''आचार्य जी! उपवास रोगों के उपचार मे सहायक है यह कैसे पता चला।'' महेश ने जिज्ञासा प्रकट की।

''उपवास से रोगों के उपचार के लिए खोज का सिलसिला तो बहुत पहले से चल रहा था। क्योंकि लोग जानना चाहते थे कि प्राचीन समय में हमारे ऋषि–मुनि दीर्घकालीन उपवास रखकर कैसे निरोगी रहकर लंबा जीवन जीते थे। किंतु इसमें पूर्ण रूप से सफलता तब मिली जब जापान के वैज्ञानिक योशिनोरी ओसुमी ने २०१६ में पता लगाया कि उपवास के दौरान कोशिकाएँ चक्रित होती रहती हैं। उन्हें इस खोज के लिए चिकित्सा विज्ञान का नोबेल पुरस्कार भी मिला। इसीलिए अब तो डॉक्टर भी उपवास की सलाह देते हैं।''

गौरी बोली– ''मैं तो अब माता जी के साथ हर एकादशी का व्रत लूँगी।'' सभी खिलखिला कर हँसने लगे। तभी वादन की घंटी बजी। सभी बच्चों ने खड़े होकर आचार्य जी को धन्यवाद दिया।

– ऊधमसिंह नगर (उत्तराखण्ड)

कर भला हो भला

चित्रकथाः देवांशु वत्स

लौट आओ राम

– प्रकाश मनु

राम के वनवास की बात सुनते ही अयोध्या में उदासी छा गई। प्रजा तो दुखी थी ही, पेड़–पौधों तक की शक्ल ऐसी हो गई, जैसे रो रहे हों।

गलियाँ, सड़कें, रास्ते की धूल और पत्थर भी रो रहे थे। मानों करुणा की नदी बह निकली हो।

किसी की समझ में नहीं आ रहा कि देखते ही देखते यह हो क्या गया ? राम को तो राज्य मिला था। राजगद्दी मिली थी। बड़े जोर–शोर से राजतिलक की तैयारियाँ हो रही थीं। तो फिर यह बिजली कहाँ से आकर टूट पड़ी, कि देखते ही देखते सारे मंगल गान बिखर गए। फूल मुरझा गए।

पूरी अयोध्या में दुःख ही दुःख छा गया था।

जब श्रीराम छोटे भाई लक्ष्मण और सीता जी के साथ वन की ओर चले, तो अयोध्या की सारी प्रजा व्याकुल होकर उनके साथ–साथ चल दी। जब अयोध्या में राम ही नहीं तो फिर भला वहाँ रहने से लाभ ?

अब रामचंद्र जी तो ठहरे प्रजावत्सल। करुणानिधान। सबके मन की थाह लेने वाले। उन्होंने लोगों को तरह–तरह से समझाया, पर प्रजा प्रेम के मारे रो पड़ती थी। किसी से कुछ कहा न जाता। जैसे किसी ने उनकी सुध–बुध हर ली हो।

सारी अयोध्या की अजब हालत थी। देख–देखकर कलेजा फटता था।

आखिर रात के समय जब प्रजा धूल से बेखबर सो रही थी, रामचंद्र जी ने सुमंत से कहा, ''चलिए सुमंत जी, यही समय है निकल जाने का। रथ को कुछ इस तरह होशियारी से चलाइए कि पहियों के निशान न दिखाई दें। जागने पर प्रजा को पता न चल पाए कि रथ किधर गया है।''

सचमुच सुमंत जी ने रथ को ऐसे ही चलाया। शीघ्र ही वे शृंगवेरपुर आ पहुँचे। सामने गंगा थी। कल–कल बहता गंगा का शीतल, निर्मल जल। मानो अपनी सुमधुर कल–कल, छल–छल से राम, लक्ष्मण और सीता जी का स्वागत कर रहा हो।

सभी ने गंगा को प्रणाम कर, वहीं विश्राम किया।

तब तक निषादराज गुह को श्रीराम के आने का समाचार मिल गया था। अपने साथियों और संबंधियों के साथ वह दौड़ा–दौड़ा वहाँ आया।

प्रेम से उनका स्वागत करके बोला– ''मेरा सौभाग्य कि आपसी भेंट हुई। चलिए, अब पुर में चलकर विश्राम कीजिए। आपकी सेवा करने से बढ़कर खुशी मेरे लिए कुछ और न होगी।''

कहते–कहते निषादराज का पूरा शरीर रोमांचित हो उठा। उसे लगा, साक्षात् ईश्वर ही तो उसके राज्य में आ निकले हैं। भला इससे अधिक प्रसन्नता और उल्लास की बात क्या हो सकती थी।

निषादराज की आँखों से जैसे प्रेम की वर्षा हो रही हो। गंगा सरीखा उज्ज्वल मन था उसका।

राम उसके मन का भाव समझ गए। पर फिर पिता को दिया गया अपना वचन स्मरण हो आया। बोले–''नहीं भाई! हम वनवास के लिए निकले हैं। ऐसे में पुर में जाकर विश्राम करना ठीक नहीं है।''

रात को वहीं अशोक के एक पेड़ के नीचे कुश की चटाई बिछाकर करुणानिधान राम और सीता जी ने विश्राम किया।

लक्ष्मण चौकन्ने होकर पहरा दे रहे थे। निषादराज भी आकर लक्ष्मण के पास बैठ गया। और प्रेम से भरकर बातें करने लगा।

पूरी रात यों ही बातें करते बीती। श्रीराम और सीता जी को इस तरह जमीन पर लेटे हुए देख, बार-बार निषादराज की आँखें भर आतीं। सोचता, भला इन्हें दुःख देकर किसे सुख मिला होगा। हाय, यह धरती फट क्यों नहीं जाती?

सुबह राम और लक्ष्मण जी ने बड़ का दूध

मँगवाकर जटाएँ बनाईं। सीता जी ने भी वल्कल वस्त्र धारण किए। देखकर निषादराज की आँखों में आँसू छलछला आए। वह सोच रहा था, ''ये लोग कितने कोमल हैं। अयोध्या के राज भवन में कितने सुख से रहते होंगे। पर अब यहाँ इस तरह...! इनकी यह दशा देखकर हृदय टुकड़े-टुकड़े हुआ जाता है।''

पर निषादराज के मन की विकलता देख, राम ने समझाया, ''देखो भाई! सुख और दुःख तो जीवन में आते ही हैं। इनका क्या सोचना? हो सकता है, यह किसी अच्छे के लिए हो। ऐसी परीक्षाओं से घबराना नहीं चाहिए। फिर जीवन इस सबसे बड़ा है। बहुत बड़ा। यदि जीवन में बड़े आदर्श न हों, तो जीने का मतलब ही क्या है!''

सुमंत जी का मन भी इसी तरह हाहाकार कर रहा था। बोले, ''मुझे महाराज ने कहा था, राम, सीता और लक्ष्मण को थोड़ा वन में घुमाकर वापस ले आना। अब आप लोग लौट चलिए। वहाँ सभी आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।''

श्रीराम ने कहा– ''प्यारे भाई सुमंत जी! आप ही सोचिए। सच्चाई के लिए वीरों ने कितने-कितने कष्ट झेले हैं। मैं पिता को दिए अपने वचन से फिर गया, तो लोग मुझे क्या कहेंगे? क्या ऐसा जीवन जीने से कोई लाभ है?''

बड़ी कठिनाई से रामचंद्र जी ने आग्रह करके, सुमंत जी को वापस भेजा और आगे की यात्रा के बारे में विचार करने लगे।

श्रीराम लक्ष्मण, निषादराज और सीता जी सहित गंगा तट पर पहुँचे, तो तुरंत केवट पास आ गया। बड़े ध्यान से श्रीराम की ओर देखता हुआ बोला– ''हे प्रभु राम! आप वही हैं न, जिनके चरणों की धूल लगते ही पत्थर की शिला स्त्री में बदल गई। अवश्य आप वही हैं। अहिल्या की वह कथा मैंने खूब सुनी है। खूब अच्छी तरह।''

''अब आप ही बताइए, राम जी! जब पत्थर

की यह स्थिति हो सकती है, तो मेरी नाव तो काठ की है। एकदम पुरानी-धुरानी। टूटी-फूटी सी। इसी से मेरा घरबार चलता है। यदि यह भी आपके चरणों की धूल से स्त्री बनकर उड़ गई, तो मेरा तो जीवन कठिन हो जाएगा। इसलिए हे प्रभु, यदि आप पार जाना चाहते हैं, तो मुझे चरण धोने की अनुमति दीजिए।''

केवट की अटपटी, पर सीधी-सरल बात सुनते ही श्रीराम मुस्कुराने लगे। समझ गए केवट की चतुराई को। उन्होंने केवट की बात मान ली। श्रीराम, लक्ष्मण और सीता जी के चरण धोकर केवट ने उन्हें नाव में बैठाया और बड़े प्रेम से नदी पार कराई।

दूसरे किनारे पर उतरकर राम सोच में पड़ गए। भला केवट को उतराई में क्या दिया जाए?

वे तो सब कुछ छोड़कर वनवास के लिए आए हैं। इसलिए राजमुद्राएँ तो उनके पास हैं नहीं।

इतने में ही सीता जी ने अपनी अँगूठी उतारकर दी। राम ने वह अँगूठी केवट की ओर बढ़ाई तो वह हाथ जोड़कर बोला- ''प्रभु! आपको नाव में बैठाकर जो पुण्य मैंने लिया है, उससे मेरा जीवन धन्य हो गया। फिर भी आप देना ही चाहें, तो लौटते समय जो भी आप भेंट देंगे, मैं प्रसन्नता से ले लूँगा।''

केवट की सीधी-सरल बातों में ऐसा प्रेम था कि श्रीराम से कुछ कहते न बनता था।

केवट के जाने के बाद वे बड़े प्रेम से निषादराज से बोले- ''मित्र! अब आप भी अधिक कष्ट न करें। यहीं से लौट जाइए।''

पर निषादराज न माना। निहोरा करते हुए बोला- ''हे प्रभु राम! मुझे इतना शीघ्र अपने से अलग न करें। मैं वन के चप्पे-चप्पे से परिचित हूँ। आपको आगे राह दिखाकर मैं लौट आऊँगा।''

राम ने सिर हिलाकर 'हाँ' कहा तो निषादराज का मुख खिल उठा। उससे प्रेम भरी बातें करते हुए रामचंद्र जी की यात्रा चलती रही। बातों-बातों में थकान का पता ही नहीं चलता था।

जब काफी आगे आ गए, तो रामचंद्र जी ने बड़ा आग्रह करके निषादराज को पुन: जाने के लिए राजी किया। और ऋषि-मुनियों से भेंट करते हुए, आगे बढ़े। आखिर वे चित्रकूट पर्वत पर पहुँचे तो लक्ष्मण ने कुटिया के लिए एक सुंदर स्थान चुना। कुटिया में घास की चटाई बिछाई गई।

कहाँ तो राजमहलों का सुख-ऐश्वर्य और कहाँ घास की यह मामूली चटाई। पर सीता जी इतनी प्रसन्न थीं, जैसे वन में ही दुनिया का सारा आनंद सिमट आया हों।

उधर निषादराज वापस पहुँचा, पर उसका मन तो राम में ही अटका था। बार-बार विकल होकर सोचता, ''ये लोग कितने सुंदर हैं, कितने निश्छल हैं। फिर भी कैसे कष्ट झेल रहे हैं। भाग्य का भी यह कैसा न्याय है।''

फिर अगले ही पल सोचने लगता, ''प्रभु राम यदि सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मण सहित जंगल में न आते, तो भला हम उनके दर्शन कैसे करते! शायद

विधाता ने यही सोचकर इन्हें वन में भेजा हो।''

ईश्वर की लीला कोई नहीं जानता।

मन ही मन जैसे वह अपने आप से कहता, ''चलो! वन में ही सही, पर श्रीराम सुख से रहें। इन पर कोई संकट आया, तो मैं अपने प्राण न्यौछावर करके भी इन्हें हर कष्ट से बचाऊँगा।''

निषादराज गुह को लगा कि उसका मन जैसे उसके काबू में नहीं रहा। जहाँ–जहाँ प्रभु राम, वहीं वह दौड़–दौड़कर जाता है। और मुग्ध–सा उनकी अनुपम लीलाएँ देखता रहता है।

एक दिन निषादराज अपने घर के बाहर बैठा यही सोच रहा था। उसके साथी उसका मन बहलाने का प्रयत्न कर रहे थे। वन में रामचंद्र जी के कष्टों के बारे में विचार कर रह–रहकर उसकी आँखें भर आतीं।

निषादराज इन्हीं विचारों में था कि तभी उसे कुछ दूरी पर शोर सुनाई दिया। ऐसा लगा कि एक साथ बहुत–से लोग मिलकर चले आ रहे हैं।

जंगल में ऐसा बहुत कम देखने को मिलता था।

निषादराज व्याकुल होकर सोचने लगा, ''ये लोग कौन हैं? यहाँ क्यों आए हैं? क्या किसी ने श्रीराम को विपत्ति में देख, उन पर चढ़ाई करने के लिए सेना भेजी है?''

यह तो अच्छी बात नहीं है। यदि ऐसा हुआ तो मैं अपने प्राणों पर खेलकर भी रामचंद्र जी को बचाऊँगा।

इतने में ही एक वनवासी दौड़ा–दौड़ा आया। वह बुरी तरह हाँफ रहा था। चेहरा लाल। उत्तेजित होकर बोला– ''सुनिए निषादराज! अयोध्या से भरत आ रहे हैं। सुना है, वह श्रीराम पर चढ़ाई करने आए हैं। साथ में परिवार के लोग और सेना भी है।''

''ओह भरत! क्या उन्होंने सोच लिया है कि राम इस समय थके हैं, और उनके पास सेना भी नहीं है। तो उन्हें आसानी से जीता जा सकता है। पर मेरे होते वे ऐसा नहीं कर सकते। मैं प्रभु राम की रक्षा करने के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा दूँगा।''

कहते हुए निषादराज का चेहरा तमतमा गया। होंठ फड़कने लगे। निषादराज ने उसी समय अपने साथियों को बुलाकर कहा– ''यदि श्रीराम पर संकट आया तो हम सभी अपने प्राणों की बलि दे देंगे। यदि जीवन सफल करना हो तो आगे बढ़कर अयोध्या की सेना का सामना करो।''

फिर एक क्षण के लिए कुछ सोचकर उसने कड़कती आवाज में आदेश दिया।– ''तुम लोग अभी दौड़कर जाओ। सभी नावें कब्जे में ले लो, ताकि सेना नदी पार न कर सकें। यदि वे छीनने का प्रयत्न करें तो एक साथ सभी नावों को डुबो दो।''

निषादराज की बात सुनते ही एक अनुभवी बूढ़े निषाद ने कहा– ''ठहरो निषादराज! एक बार फिर सोच लो। मुझे तो कुछ और ही बात लगती है। भरत लड़ाई करने नहीं, शायद प्यार और मित्रता का संदेश लेकर आए हैं। इसीलिए साथ में रानियाँ और गुरु

वसिष्ठ भी हैं।''

सुनकर निषादराज ने एक क्षण चुप रहकर सोचा। फिर बोला– ''मुझे भी लगता है, इस बात में कुछ दम है। हमें शीघ्रता में कुछ नहीं करना चाहिए। आप लोग यहीं रहें। युद्ध की तैयारी में ढील न दें। मैं अकेला ही जाऊँगा। टोह लगाकर आऊँगा, भला भरत जी के मन में क्या है!''

थोड़ी ही देर में निषादराज भरत के पास जा पहुँचा। पहले उसने गुरु वसिष्ठ के चरणों में प्रणाम किया। जैसे ही उसने अपना नाम बताया, वसिष्ठ जी ने प्रेम से उसे अपनी छाती से लगा लिया। उनका प्रेम देखकर निषादराज धन्य हो गया।

फिर भरत तो श्रीराम का सखा जानकर इतने प्रेम से मिले कि निषादराज की आँखों से अश्रु बह निकले। सोचने लगे, ''अरे! ये तो राम के प्रेम में सिर से पैर तक भीगे हुए हैं। इनके रोम–रोम में राम की पुकार समाई हुई है। ओह! मैंने इनके बारे में क्या सोच लिया था। कितनी बड़ी भूल हो जाती यदि...!''

लौटकर निषादराज ने सभी को यह बताया, तो शृंगवेरपुर में सब ओर भरत का जय–जयकार हो उठा। गंगा की लहरें भी मानो उठ–उठकर उसमें अपनी आवाज मिला रही थीं।

अब तो स्वयं निषादराज भी भरत के साथ–साथ राम को वापस अयोध्या चलने के लिए मनाने को साथ चल पड़ा।

वह भरत और अयोध्या के लोगों को रास्ता दिखाते हुए आगे–आगे चल रहा था, तो उसे लग रहा था, उसके पैर प्रभु राम के प्रेम की डोर से बँधे, स्वयं आगे की ओर चले जा रहे हैं। और हृदय प्रेम और आनंद से भीग–सा गया है।

यही स्थिति तो भरत और उनके साथ आए अयोध्या के सभी नर–नारियों की थी।

– फरीदाबाद
(हरियाणा)

रोचक जानकारी

चटपटा व स्वादिष्ट आलू

– चाँद मोहम्मद घोसी

चटपटे व स्वादिष्ट आलू के पतले, कुरकुरे, सुनहरे वेफर भला किसे अच्छे नहीं लगते! सभी चटखारे लगाकर खाते हैं। सर्व प्रथम आलू के वेफर कैसे बने इसकी भी रोचक कहानी है।

वर्ष १८८५ में न्यूयार्क के एक भोजनालय में एक रसोइये ने केवल संयोग से इसका आविष्कार किया। संध्या के समय एक ग्राहक बार–बार शिकायत किये जा रहा था कि उन्हें परोसे गये आलू न पतले हैं न करारे। उसकी शिकायतों से रसोइये का पारा चढ़ गया और उसने पतले पन्ने के समान कतरे हुए आलू पास ही रखी एक ठंडे जल की बाल्टी में उलट दिए।

उसके बाद वह उनके बारे में सब कुछ भूल गया। उनकी याद उसे तब आई जब एक और ग्राहक ने तले आलुओं की माँग की। झटपट उसने बाल्टी में से आलू निकाले और खोलते तेल की कढ़ाई में झोंक दिए। थोड़ी देर बाद अपने ग्राहकों को वही कुरकुरे नमकीन आलू चटखारे लेकर खाते देखकर उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। इस प्रकार उस दिन जन्म हुआ आलू के वेफर का जो आज पूरे विश्व में लोकप्रिय हैं।

सबसे पहले १७वीं सदी में पुर्तगाली लोग भारत में आलू लाये। उन्होंने भारत के पश्चिमी तट पर आलू की खेती आरंभ की, जहाँ इन्हें 'बटाटा' कहा जाता था। अँग्रेजों ने बंगाल में आलू का प्रचलन किया, जहाँ ये आलू के नाम से प्रसिद्ध हुए। अब तो सम्पूर्ण भारत में इनकी खेती होती है। हालाँकि आलू में श्वेतसार यानि स्टार्च काफी मात्रा में होता है, पर प्रोटीन और विटामीन 'सी' भी उसमें विद्यमान हैं। प्रचलित धारणा के विपरीत आलू कम कैलरी का, वजन न बढ़ाने वाला खाद्य है। हाँ वेफर के रूप में तले जाने पर आलू का विटामीन 'सी' नष्ट हो जाता है।

– मेड़ता सिटी (राज.)

कविता : लालबहादुर शास्त्री जयन्ती : २ अक्टूबर

लालबहादुर शास्त्री

– मोहन उपाध्याय

गाँधी–टोपी सादे जूते, जाकिट कुर्त्ता खादीवाला,
भोलीभाली सूरत जिसकी, फूलों–सा नित हँसनेवाला;
रंग साँवला और सलौना, बड़ी माधुरी मूरतवाला,
छोटे कद का बड़ा आदमी, लालबहादुर धोतीवाला।

हाथ जोड़कर बड़े प्रेम से, हँसकर सबसे मिलनेवाला,
दुश्मन पर भी अच्छाई की, अपनी छाप बिठानेवाला;
विश्वशांति का अटल पुजारी, सच्चाई पर डटनेवाला,
देख मुसीबत ना घबराये, ऐसा था वह हिम्मतवाला।

छंब–क्षेत्र में घुस दुश्मन ने, जब भारत पर हाथ उठाया,
जाग उठा तब उसका पौरुष, दुश्मन को फिर मजा चखाया;
टूट गया पापड़–सा पैटन, जेट नेट ने मार गिराया,
सारी दुनिया दंग रह गयी, भारत का सम्मान बढ़ाया।

ताशकंद में शांतिवार्ता, करने की जब बारी आयी,
दौड़धूप इतनी कर डाली, बात शांति की कुछ बन पायी;
पूर्ण हुआ समझौता लेकिन, बेचैनी थी मन में छायी,
टूट गयी वह कोमल काया, घड़ी भयंकर अंतिम आयी।

ओ! भारत के लालबहादुर, याद करेंगे भारतवासी,
जब तक धरती आसमान है, जब तक गंगा यमुना काशी;
नई चेतना तुम ले आये, जन–जन की मिट गयी उदासी,
श्रद्धासहित प्रणाम तुम्हें है, ओ! मृत्युंजय स्वर्गनिवासी।

– अजमेर (राजस्थान)

बाल साहित्य के सच्चे साधक – नारायणलाल परमार

प्रस्तोता – डॉ. नागेश पांडेय 'संजय'

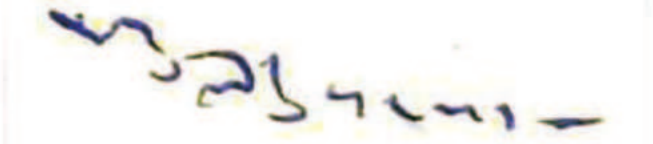

मातृ भाषा गुजराती मूल के नारायणलाल परमार का हिंदी बाल साहित्य के विकास में विशिष्ट योगदान है। उन्होंने पारम्परिक और आधुनिक दोनों तरह का साहित्य लिखा। जहाँ लोक कथाओं के माध्यम से अपनी अक्षुण्ण परम्पराओं को सहेजा तो वहीं नई दृष्टि से युक्त प्रेरणास्पद रचनाओं का सृजन कर निराश हृदयों में अछोर आशा का संचार भी किया।

गुजरात के अजार (कच्छ) में १ जनवरी १९२७ को जन्में नारायणलाल जी माता विजया एवं पिता नानजी लालजी परमार सिद्धांतों पर चलने वाले पत्रकार थे। उन्हें संघर्ष स्वीकार था। किंतु समझौता नहीं। यही स्वाभिमान नारायणलाल जी में भी कूट–कूट कर भरा था। जीविका के लिए उन्हें बहुत संघर्ष करना पड़ा। कई छोटे–मोटे पदों पर कार्य करते हुए अंततः वे धमतरी महाविद्यालय में प्राध्यापक/विभागाध्यक्ष जैसे विशिष्ट पद तक पहुँचे।

नौ वर्ष की अवस्था में नारायणलाल जी अपने सुविज्ञ कक्षाध्यापक अनंतराम शर्मा जी की प्रेरणा से काव्य सृजन की ओर उन्मुख हो गए। शिक्षक शर्मा जी इतिहास, भूगोल और व्याकरण जैसे विषयों को भी कविता में ढालकर रटा देते थे।

उनकी ही प्रेरणा से परमार जी ने समस्यापूर्ति 'स्वतंत्र फिर से भारत हो' के लिए एक कविता लिखी थी। आगे चलकर उनकी इस कविता को १९४४ में दैनिक 'लोकमत' और फिर १९४५ में 'बाल सखा' में भी स्थान मिला था।

हे करतार दयामय अनुपम,
विनती सबकी सुनते हो।
आओ भारत दुःख हरने को,
अब मन में क्या गुनते हो ?
जब–जब विपत्ति पड़ी भारत पर,
तुमने ही दुःख टारा था।
द्रुपद सुता की लाज बचाई,
यह उपकार तुम्हारा था।
आया समय नाथ, वह आगे,
रक्षा करन हेतु आओ।
भारतवासी भटक रहे हैं,
मार्ग प्रदर्शन कर जाओ।
बहुत दुखी हैं नाथ उबारो,
दुखियों का दुःख गारत हो।
हो जाए यह उच्च जगत में,
स्वतंत्र फिर से भारत हो।

नारायणलाल जी ने शिशु, बालक और किशोरों तीनों के मन को समझकर उत्तम साहित्य की रचना की। उनकी कविताएँ, पद्य कथाएँ, कहानियाँ, एकांकी और प्रेरक प्रसंग बाल साहित्य की धरोहर हैं। बाल साहित्य की उनकी प्रमुख पुस्तकें हैं– पन्द्रह अगस्त, गद्दार कौन, जीवन शिक्षा, छत्तीसगढ़ की लोक कथाएँ, बढ़े चलो, गीत गाएँ, चरित्र बोध की कहानियाँ, बचपन की बाँसुरी, चार मित्र, ईश्वर की तलाश, सोने का साँप, चतुर बगुला, वाणी ऐसी बोलिए, मोनू भैया, अक्ल बड़ी या भैंस, ज्योति से ज्योति जगाते चलो आदि।

परमार जी ने आत्मकथ्य में लिखा है कि किसी भी देश की सुख–शांति के लिए वहाँ के बच्चों को सुसंस्कृत करना आवश्यक है, जिसके लिए साहित्य ही निर्णायक भूमिका निभाता है।

परमार जी साहित्य के सच्चे साधक थे। जो जिया, उसे कागज पर उतार दिया। उनका यह मुक्तक उनके जीवन दर्शन को ध्वनित करता है–

प्रलोभन थे मगर मन के नियम संयम नहीं डूबे।
उमड़ती आस्था के द्वीप सुंदरतम नहीं डूबे।
जहाँ पागल अँधेरे की जरा सी एक धमकी पर,
विवश हो सूर्य भी डूबा वहाँ पर हम नहीं डूबे।

२७ अप्रैल २००३ को मध्यप्रदेश के धमतरी (अब छत्तीसगढ़ में) उनका देहांत हो गया। सूर्य से अधिक तेज रखने वाली उनकी दमक आज भी साहित्य जगत में विद्यमान है।

आइए, पढ़ते हैं उनकी कुछ अनूठी रचनाएँ–

दादा जी का खर्राटा

दूर–दूर तक गूंजा करता
है दादा जी का खर्राटा।

पत्ते थर–थर काँप रहे हैं
पेड़ खड़े हैं हक्के–बक्के।
बरामदे के हर खंभे के
मानों छूट रहे हैं छक्के।

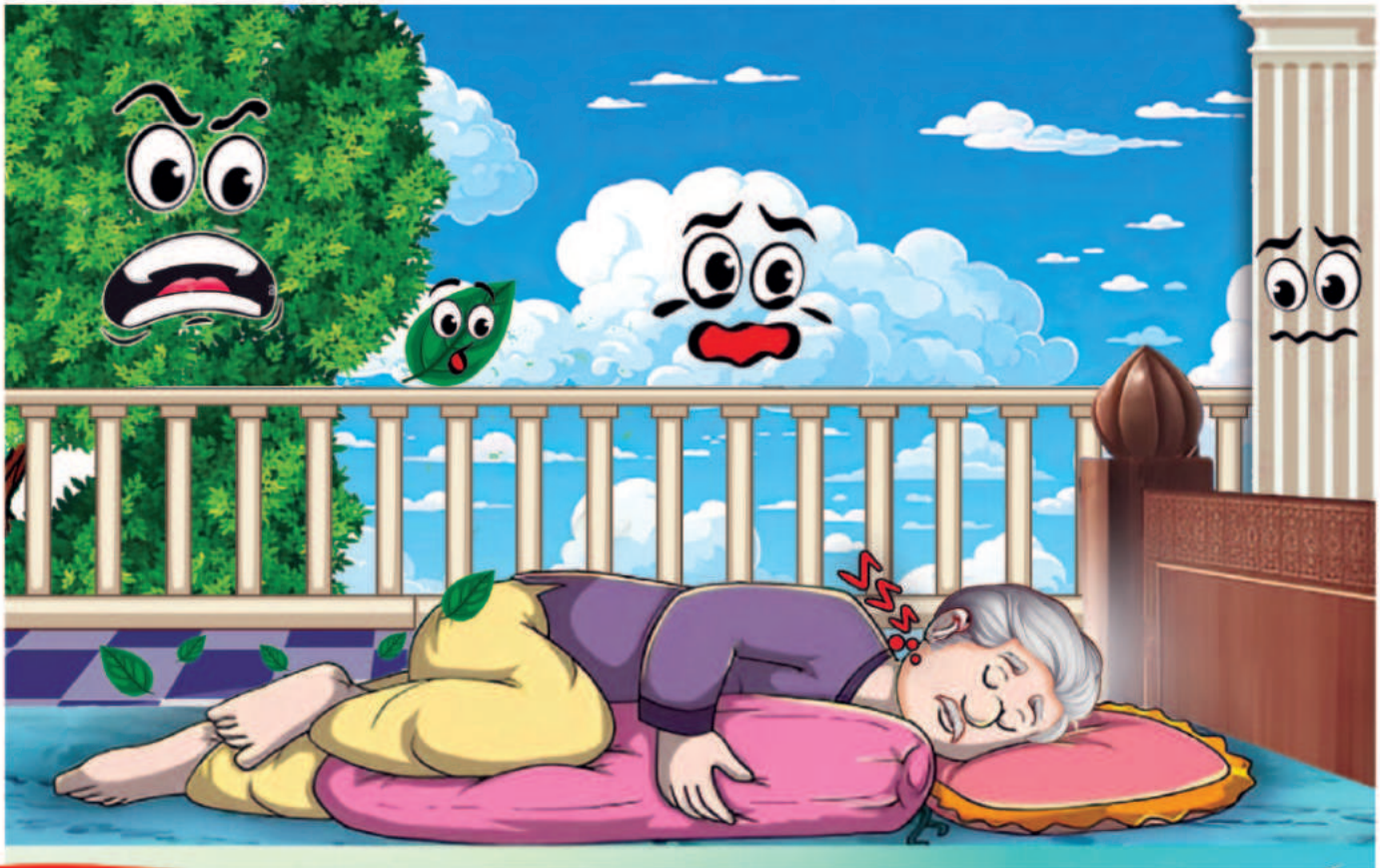

भरी दोपहर, दूर-दूर तक
नजर नहीं आता सन्नाटा।

आँधी पास नहीं आती है,
छूट रहा है उसे पसीना।
पशु-पक्षी लें कहाँ बसेरा,
मुश्किल हुआ सभी का जीना

याद नहीं होगा मौसम को,
लगा कभी ऐसा झन्नाटा

नीकू-चीकू भी डरते हैं,
जैसे टैंक चल रहा कोई।
या कि धमन भट्टी में भारी
लोहा अभी ढल रहा कोई।

आसमान में उड़ती रहती,
नहीं मारती चील झपाटा।

आलू जीता, कद्दू हारा

एक सवेरे कद्दू आया,
बोला-सुन रे आलू।

दोनों चलकर दौड़ लगाएँ,
जगह देख कर ढालू।

कद्दू बीच राह में फूटा,
चूर हुआ अभिमान।

छोटे से आलू ने बढ़कर,
मार लिया मैदान।

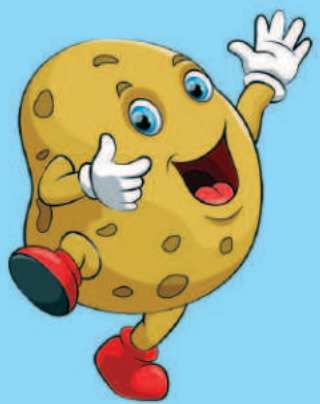

चलो महक जाएँ हम

आओ, चलो महक जाएँ हम,
जैसे वन में चन्दन महके।

हम तो यहाँ मुसाफिर हैं सब,
नहीं देर तक हम ठहरेंगे।
पता नहीं किसको क्या देंगे
या फिर हम किससे क्या लेंगे।
यह तो बात समय की होगी,
समय नहीं आता है कहके।

चलो रोशनी हम सब बाँटे,
छलक-छलक जाए सागर से।
अच्छा काम शुरू होता है,
सदा साथियों अपने घर से।

दूर-दूर तक लगे कि मानो,
कोई सोन चिरैया चहके।

हम सब मोती इस धरती के,
आपस में हम सबको मोहें।

अपना-अपना काम करें हम,
कभी किसी की बाँट न जोहें।

हम इतिहास बनाने वाले,
बात-बात पर कभी न बहके।

मिर्च का चुनाव

अपना वोट मुझे दो भाई,
बोली मिर्च महान।

मैंने अब तक काट लिये हैं,
बड़ों-बड़ों के कान।

मुझे बना लो नेता अपना,
लगे न कौड़ी कानी।

मेरा तेज मिजाज देखकर,
माँगेगे सब पानी।

– शाहजहाँपुर (उ. प्र.)

माथा-पच्ची

रास्ता बताइए

– चाँद मोहम्मद घोसी
मेड़ता सिटी (राजस्थान)

फुटबॉल खेलते समय गेंद राजकुमार की नजरों से ओझल हो गई। आप राजकुमार को गेंद के पास पहुँचा दीजिए ना।

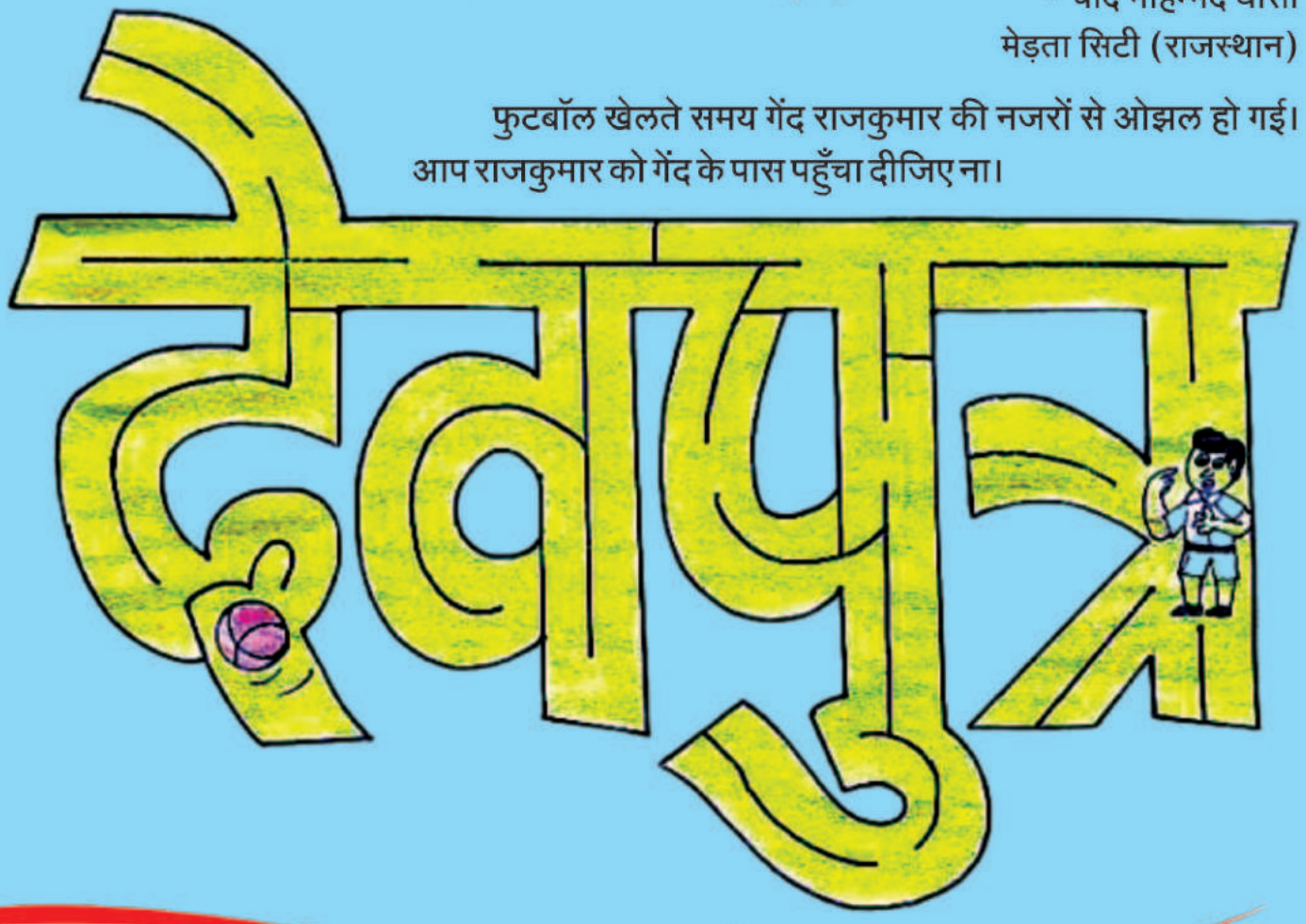

श्राद्ध

– नारायण चौहान

यह एक हरे–भरे जंगल की कहानी है। जहाँ विभिन्न प्रकार के पक्षी अपने सुंदर जीवन का आनंद लेते थे। इस जंगल में, एक प्राचीन परंपरा थी कि पक्षी अपने पूर्वजों की स्मृति में प्रतिवर्ष एक निश्चित कृतज्ञता पखवाड़ा मनाते थे।

इस पखवाड़े में वे बड़े उत्साह से भंडारा और भोजन प्रसादी का आयोजन करते थे।

जंगल के सभी पक्षी इस परंपरा को मानते थे। सिवाय एक युवा गिद्ध के। जिसका नाम झक्की था। झक्की आधुनिक जगत की शिक्षा और चमक–दमक से प्रभावित था। झक्की को यह परम्परा व्यर्थ और समय की बर्बादी लगती थी। उसने अपने मित्रों से कहा– ''क्यों हमें प्रतिवर्ष इस प्रकार के आयोजन करने पड़ते हैं? हमारे पूर्वज तो अब नहीं रहे। उनको क्या अंतर पड़ता है?''

उसके मित्रों ने उसे समझाने का प्रयत्न किया। किन्तु झक्की ने उनकी बातों को अनसुना कर दिया। और इस वर्ष भी, जब जंगल में कृतज्ञता पखवाड़ा प्रारंभ हुआ तो झक्की ने उसमें भाग नहीं लिया।

समय बीतता गया। और धीरे–धीरे झक्की ने अनुभव किया कि उसका जीवन बदलने लगा था। वह अधिकांश बीमार रहने लगा और उसकी शिकार करने की क्षमता भी घटने लगी। उसके आस–पास के पक्षियों ने अनुभव किया कि झक्की के साथ कुछ गलत हो रहा है।

एक दिन जब झक्की बहुत निराश था। उसने एक वृद्ध तोते तीरथ से सहायता माँगी। तीरथ ने उसकी समस्या को सुना और उसे बताया कि– ''बहुत समय पहले की बात है। मेरा परिवार हजारों वर्षों से बिहार के गया नामक स्थान पर गंगा के तट पर बरगद के पेड़ पर निवास करता था। मैं और मेरा परिवार देखा करता था लाखों लोग देश–विदेश से अपने पूर्वजों के लिए एक अनूठा अनुष्ठान करने के लिए गंगा नदी के तट पर आते हैं। जिज्ञासा वश एक दिन मेरी इच्छा हो गई कि यह अनुष्ठान क्या करते हैं? तब मैंने वहाँ अनुष्ठान कर रहे पंडित जी से इस पवित्र कार्य के बारे में जानने की इच्छा प्रकट की। तब पंडित जी ने बताया कि – 'यह हमारे पितरों के लिए हमारे पूर्वजों के लिए श्रद्धापूर्वक १५ दिन के पखवाड़े में तर्पण और श्राद्ध किया जाता है।' विस्तार पूर्वक उन्होंने इसका महत्व बताया।''

श्राद्ध पक्ष की उत्पत्ति और महत्व का वर्णन करने के लिए हमें हिंदू धर्म की परंपराओं और मान्यताओं को समझना होगा। श्राद्ध पक्ष, जिसे पितृपक्ष भी कहा जाता है। एक पखवाड़ा (१५ दिन) का समय है जब हिंदू अपने पितरों (पूर्वजों) का सम्मान करते हैं और उनकी आत्मा की शांति के लिए अनुष्ठान करते हैं।

विष्णु पुराण के अनुसार गया में पिंडदान करने से पितरों को मुक्ति मिलती है। ऐसा माना जाता है कि भगवान विष्णु स्वयं यहाँ पितृ देवता के रूप में विराजमान हैं। इसलिए इस स्थान को पितृ तीर्थ भी कहा जाता है।

श्राद्ध पक्ष की उत्पत्ति का वर्णन पुराणों और शास्त्रों में मिलता है। इसका प्रारंभ महाभारत काल से माना जाता है। एक कथा के अनुसार, महाभारत के महाकाव्य में जब कर्ण की मृत्यु हुई तब उसकी आत्मा स्वर्ग में पहुँची। किन्तु वहाँ उसे भोजन की स्थान पर सोने और रत्न मिले। कर्ण ने इंद्र से इसका कारण पूछा तो इंद्र ने बताया कि जब वह जीवित था, उसने हमेशा दूसरों को सोना और रत्न दिए। लेकिन अपने पितरों के लिए कभी भोजन नहीं दिया। तब कर्ण ने १५ दिन की अवधि माँगी ताकि वह पृथ्वी पर जाकर अपने पितरों के लिए भोजन का दान कर सके। इंद्र ने उसकी प्रार्थना को स्वीकार किया। और यही वह समय श्राद्ध पक्ष के रूप में जाना गया।

श्राद्ध पक्ष एक महत्त्वपूर्ण धार्मिक पर्व है। जो हमें अपने पूर्वजों की याद दिलाता है और उनकी आत्माओं की शांति के लिए हमारे कर्त्तव्यों की याद दिलाता है। इस समय का सही प्रकार से पालन करने से न केवल पूर्वजों को संतोष मिलता है। बल्कि हमारे जीवन में भी सकारात्मकता और शांति आती है।''

''झक्की! हमारे पूर्वजों का सम्मान करना और उनकी स्मृति में कृतज्ञता प्रकट करना हमारा कर्त्तव्य है। जो पक्षी इस परंपरा को नहीं मानते, उनके जीवन में दु:ख और विपन्नता आती है। क्योंकि वे अपने पूर्वजों की आत्माओं को दुखी कर देते हैं।''

झक्की ने तीरथ की बातों को गंभीरता से सुना और इस वर्ष कृतज्ञता पखवाड़ा मनाने का निर्णय लिया। उसने पूरे जंगल में सबसे पहले भंडारे का आयोजन किया और अपने पूर्वजों की स्मृति में भोजन प्रसादी वितरित की। आश्चर्यजनक रूप से, झक्की का स्वास्थ्य अच्छा होने लगा और उसकी शिकार करने क्षमता भी लौट आई।

झक्की ने अनुभव किया कि पूर्वजों का सम्मान और कृतज्ञता व्यक्त करना न केवल एक परंपरा थी, बल्कि यह उनके जीवन की खुशहाली और समृद्धि का भी आधार था। उसने अपनी गलती को समझा और कृतज्ञता पखवाड़ा को हर वर्ष मनाने का संकल्प लिया।

इस घटना के बाद झक्की ने जंगल के सभी युवा पक्षियों को इस परंपरा का महत्व समझाया। धीरे-धीरे जंगल में रहने वाले सभी पक्षी अपने पूर्वजों की स्मृति में कृतज्ञता पखवाड़ा मनाने लगे और उनका जीवन खुशहाल और समृद्ध हो गया।

इस प्रकार, पूर्वजों की स्मृति में कृतज्ञता व्यक्त करने की यह परंपरा जंगल में सदियों तक चली और सभी पक्षियों के जीवन में खुशहाली और समृद्धि लाई।

बाल पाठको! आपके मन में जिज्ञासा हो सकती है कि-

१) गया जाकर ही एक बार श्राद्ध कर्म क्यों करते हैं?

२) गंगा जी के संगम के अलावा और भी कहीं तर्पण की प्रक्रिया होती है क्या?

३) हम श्राद्ध कर्म घर में भी करते हैं?

इस सब प्रश्नों के उत्तर अपने परिवार में दादा-दादी, माता-पिता और विद्यालय के आचार्यों, शिक्षकों से पूछ सकते हैं।

- इन्दौर (म. प्र.)

राज–काज की शिक्षा

– अरविन्द जवळेकर

(गत अंक से आगे)

अहिल्या जब विवाह के बाद बहू बनकर होळकर परिवार में आई तक इसकी आयु मात्र ९ वर्ष की थी। यह दिन तो उसके पढ़ने–लिखने और खेलकूद के दिन थे। किन्तु वह कोई सामान्य लड़की नहीं थी। वह सूबेदार मल्हारराव होळकर की बहू थी। जो मालवा में होळकर राज्य के संस्थापक और शासक थे। उनके परिवार का रहन–सहन, रीति–रिवाज, अदब–कायदे सामान्य परिवारों से बहुत अलग थे।

अहिल्या बुद्धिमान तो थी ही वह शीघ्र ही सब कुछ सीख गई। और परिवार में ऐसे घुल–मिल गई जैसे उसका जन्म इसी वातावरण में हुआ हो।

अपने सास और ससुर दोनों की वह बहुत लाड़ली थी। उनसी सासूमाँ गौतमाबाई, उनकी शिक्षा–दीक्षा और पठन–पाठन की ओर विशेष ध्यान देती थी। और श्वसुर मल्हारराव भी समय मिलने पर उन्हें राजकाज की बारीकियाँ समझाते रहते थे। धीरे–धीरे वह सभी कार्यों में निपुण हो गई।

अहिल्याबाई के पति खंडेराव बचपन से उद्दंड प्रकृति के थे। पढ़ाई–लिखाई अथवा राजकाज में उनकी रुचि नहीं थी। उनका सारा समय खेलकूद और मटर–गश्ती में बीतता था।

कुसंगति के कारण उन्हें शराब की लत भी लग गई थी। उनके माता–पिता उनसे बहुत दुखी रहते थे। खंडेराव मल्हार–राव के इकलौते पुत्र और राज्य के उत्तराधिकारी भी थे। इसलिए उन्हें लेकर मल्हारराव बहुत चिंतित रहते थे।

अहिल्याबाई एक आदर्श पत्नी थी। उन्होंने अपने पति के व्यवहार में सुधार लाने के लिए जी तोड़ प्रयास किए। बचपन की बुरी आदतें आसानी से नहीं छूटती। उसके लिए निरंतर प्रयास करने पड़ते हैं।

अहिल्याबाई वही कर रही थी। धीरे–धीरे उन्हें सफलता मिलने लगी। खंडेराव के व्यवहार में सुधार दिखाई देने लगा। वे राज–काज और युद्धाभ्यास में भी रुचि लेने लगे। मल्हारराव उन्हें युद्ध क्षेत्र में भी साथ ले जाने लगे।

(आगे की कथा अवश्य पढ़िए अगले अंक में।)

– इन्दौर (म. प्र.)

अदला बदली

चित्रकथा: देवांशु वत्स

भाग गए बदमाश

– रजनीकांत शुक्ल

दिल्ली देश की राजधानी है। दूसरे स्थानों की तुलना में यह अधिक आकर्षक, सुन्दर और दर्शनीय है। इसकी इसी विशेषता के कारण हर क्षेत्र के लोगों की इच्छा रहती है कि वे यहाँ रहें। अब इतने सारे लोगों की माँग होगी और पूर्ति कम तो कीमत बढ़ना स्वाभाविक है।

इसलिए लोगों ने बसने के लिए दिल्ली के पास पड़ोस फरीदाबाद, गुरुग्राम, गाजियाबाद, नोएडा का रुख किया। यहाँ दिल्ली के मुकाबले अपेक्षाकृत कम कीमत में अच्छी जगह उपलब्ध हो गई। इससे लोगों का जीवन आसान हो गया। यह तो तय है कि किसी भी चीज के सकारात्मक पक्ष होते हैं तो नकारात्मक भी होते हैं।

लोगों की बसाहट से इन उप नगरों से आवागमन की सुविधाएँ आसान हुई। चारों ओर से सीमाएँ खुली रहने से जहाँ आसानी हुई वहाँ कुछ कठिनाइयाँ भी हुईं लोग एक राज्य में अपराध करते और दूसरे राज्य में आसानी से भाग जाते।

वह वर्ष २००१ के जुलाई महीने की उनतीस तारीख थी। दिन में मरीजों की देखभाल करने के बाद डॉक्टर अलका राय उस दिन घर जाने के लिए तैयार हुईं। उनका अपना नर्सिंग होम नोएडा में था जिसमें से वे अपना बैग उठाकर नर्सिंग होम से बाहर निकल आयीं। जाहिर है कि उस बैग में उनकी दिनभर की नर्सिंग होम में जमा हुई कमाई थी। उनके साथ इस समय उनकी बारह वर्ष की बेटी शांभवी राय थी। इस समय रात के साढ़े नौ बजे थे और अँधेरा सड़कों पर फैल चुका था।

वे बातें करती हुईं बाहर निकलकर खड़ी हुईं। उन्हें वाहन की प्रतीक्षा थी। वहाँ सड़क पर दोनों ओर से तेजी से ट्रैफिक आ जा रहा था। वाहनों का तेज प्रकाश और हॉर्न की आवाजें उनकी बातचीत में बाधा पहुँचा रही थी। किन्तु इसमें कोई नई बात नहीं थी यह रोजमर्रा की बात थी। वे उन सबकी परवाह किए बिना खड़ी हुई थीं। तभी एक मोटर साइकिल जिस पर तीन लोग बैठे हुए थे उनके लगभग इतने पास आकर रुकी कि उनका ध्यान बातों से हटकर उनकी ओर चला गया। उन्होंने नजर उठाकर देखा तो एक मोटर साइकिल सवार पीछे से उतरकर उनके ठीक सामने आ चुका था। वे उससे यह पूछना चाहतीं थीं कि आखिर उसे उनसे क्या काम है।

किन्तु वे हैरान रह गईं जब उससे उतरकर एक व्यक्ति उनके पास आया और उसने यकायक डॉक्टर राय के हाथ में पकड़े हुए हैंड बैग पर झपट्टा मारा। उसने बैग को पकड़कर ताकत से अपनी ओर खींच लिया। यह एकदम से अचानक जरूर हुआ किन्तु डॉक्टर राय का हाथ भी उस बैग में फँसा हुआ था इसलिए वह उनसे नहीं छूटा। परिणाम यह हुआ कि डॉक्टर अलका राय लड़खड़ा गईं और अपने बैग के साथ–साथ उस बदमाश के साथ में आगे की ओर खिंचती चलीं गईं।

शांभवी राय अचानक यह सब देखकर भौचक्की रह गई। वह तुरन्त अपनी माँ के साथ आगे की ओर दौड़ी और उसने पूरी ताकत से एक जोरदार मुक्का उस बदमाश के चेहरे पर जड़ दिया। उस बदमाश को इस छोटी–सी बच्ची से इसकी अपेक्षा नहीं थी। यकायक हुए इस हमले से वह लड़खड़ा गया।

बौखलाकर वह अपने आगे खड़े उसी मोटर साइकिल सवार साथी की ओर बढ़ा जो मोटर साइकिल स्टार्ट किए हुए भागने के लिए उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। इससे पहले कि लड़खड़ाकर सँभलता हुआ वह अपने साथी तक पहुँच पाता। शांभवी फुर्ती से दौड़ी उसने मोटर साइकिल चला रहे लड़के के हेलमेट को पकड़ लिया जिसमें वह अपना चेहरा भी छुपाए हुए था।

शांभवी ने जब हाथ बढ़ाया तो संयोग से हेलमेट उसके हाथों में मजबूती से पकड़ में आ गया। बस फिर क्या था शांभवी ने पूरी ताकत से उसे अपनी ओर खींच लिया। अब तक उसका पीछे वाला साथी मोटर साइकिल पर बैठ चुका था। उसने अपने साथी से तेजी से भागने के लिए कहा।

किन्तु शांभवी के द्वारा मारा गया झटका इतना

तेज था कि मोटर साइकिल चलाने वाले का संतुलन उससे बिगड़ गया और मोटर साइकिल गिर गई। इसी के साथ वे तीनों सवार भी नीचे गिर गए।

इससे पहले का घटनाक्रम इतनी तेजी से हुआ था कि किसी को कुछ समझ नहीं आया। लेकिन मोटर साइकिल के गिरने से रास्ता चलते कई लोगों का ध्यान इस ओर चला गया। जैसे ही उन बदमाशों ने देखा कि लोगों का उनकी ओर ध्यान जा चुका है। तो वे घबरा गए। अब उनके पास इतना समय नहीं था कि वे उठकर मोटर साइकिल स्टार्ट करते और उस पर बैठकर रफूचक्कर हो पाते। वे समझ गए कि रास्ता चलती वह भीड़ उन्हें इतना अवसर नहीं देगी। उन्होंने मोटर साइकिल वहीं छोड़ी और सिर पर पैर रखकर भाग लिए। कुछ ही देर में वहाँ भीड़ जमा हो चुकी थी। यह ठीक था कि वे बैग नहीं ले जा सके थे और अपनी मोटर साइकिल भी छोड़ गए थे।

स्थानीय पुलिस थाने में रिपोर्ट (प्राथमिकी) लिखाई गई और रजिस्ट्रेशन नम्बर के आधार पर उसके मालिक को पुलिस ने धर दबोचा। इस तरह नन्हीं शांभवी राय के साहस और हिम्मत से लुटेरे उनकी माँ का बैग नहीं ले जा सके और वे पकड़े भी गए। शांभवी को उनके इस साहस के लिए वीरता पुरस्कार के लिए चुना गया। देश के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के द्वारा गणतंत्र दिवस से पूर्व शांभवी राय को वर्ष २००२ का राष्ट्रीय बाल वीरता पुरस्कार प्रदान किया गया। गणतंत्र दिवस की परेड में हाथी पर बैठकर उसने भाग लिया।

नन्हे मित्रो!

हम तो हैं तैयार हर एक पल, कभी न हिम्मत हारें,
कूद पड़ें मैदान में जो, तो हम ही बाजी मारें।
करें ना परिणामों की चिन्ता, निज कर्त्तव्य निबाहें,
करें लगन से काम अगर, तो पा जाएँ जो चाहें।।

– नई दिल्ली

स्वस्थ, रोगमुक्त, संतुष्ट और आनन्दित जीवन के सूत्र

जो जागत है सो पावत है

– डॉ. मनोहर भण्डारी

व्यक्तित्व का समग्र स्वास्थ्य तथा विकास और पंचकोशीय अवधारणा– तैत्तिरीय उपनिषद आदि ग्रंथों में पंचकोशीय अवधारणा के अन्तर्गत अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय कोशों का उल्लेख है। अन्न से बना और अन्न आधारित हमार स्थूल शरीर अन्नमयकोश या शरीर चेतना कहलाता है। यह शुद्ध पौष्टिक आहार, पर्याप्त प्राणवायु, पर्याप्त पानी, व्यायाम, पर्याप्त निद्रा आदि से स्वस्थ रहता है।

प्राणवायु पर आश्रित हमारे ऊर्जा शरीर को जीवनी शक्ति या प्राण ऊर्जा कहते हैं। यह प्राणमयकोश प्राणायाम, सत्संग, सम्यक, सात्विक और पौष्टिक आहार, पर्याप्त निद्रा, संगीत साधना आदि से स्वस्थ रहता है। जिसके द्वारा ज्ञान होता है, वह मन है तथा मन को ही मनोमयकोश कहते हैं।

चंचल मन अच्छे–बुरे, सुख–दु:ख आदि के बीच झूलता रहता है। सद्गुण, एकाग्रता, ध्यान, सत्संग, स्वाध्याय, सदाचार, सेवाभाव से मन पुष्ट और स्वस्थ रहता है।

अनुभव आधारित ज्ञान, प्रभा, आत्मानुभूति, समता भाव, नीर–क्षीर विवेक को विज्ञानमय कोश कहते हैं। यह निष्पक्षता, पारदर्शिता, पूर्वाग्रह मुक्त विचार, अनासक्ति, मन की एकाग्रता आदि से स्वस्थ और पुष्ट होता है।

आनन्द और कल्याण के भाव को चित्त या आनन्दमय कोश कहते हैं। यह किसी भी व्यक्ति या प्राणी की नि:स्वार्थभाव से सहायता से पुष्ट और स्वस्थ होता है। इस पत्रक में लिखे निर्देशों के पालन से सभी कोश पुष्ट और स्वस्थ हो सकते हैं।

जो जागत है, सो पावत है– सुबह साढ़े पाँच तक जाग जाएँ। सात लाख लोगों पर आनुवांशिक वेरिएंट और जीनोम आधारित शोध के बलबूते इंग्लैंड के **सेम्युअल जोन्स** और **प्रो. माइकल विडान** ने बताया कि जो लोग देर से जागते हैं, उन्हें डायबिटीज, मोटापा, पागलपन, अवसाद, मानसिक रुग्णता आदि का खतरा अधिक रहता है।

अमेरिकन जर्नल इमोशन के अनुसार जल्दी जागने वाले मानसिक रूप से स्थिर रहते हैं। मूड अच्छा रहता है। स्मरण शक्ति अच्छी रहती है। निराश नहीं होते हैं। रोग प्रतिरोधी प्रणाली यानी इम्युनिटी सशक्त होती है।

तनाव प्रबंधन अच्छा रहता है। प्रसन्न रहते हैं, आत्मविश्वास से भरे रहते हैं। तीन दर्जन से अधिक वैज्ञानिक अध्ययनों के निष्कर्ष के अनुसार जल्दी जागने वाले अधिक स्वस्थ, अधिक सफल होते हैं। सुचिन्तित योजना बनाते हैं। नेतृत्व करने वाले होते हैं और पढ़ाई में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करते हैं।

देर से उठने वालों की तुलना में अधिक सफलता मिलती है।

– इन्दौर (म. प्र.)

गोपाल का बोझ

– तपेश भौमिक

सुबह–सुबह गोपाल अपने कंधे पर एक भारी–भरकम बोझ उठाए राजमहल की ओर चलने लगा था। बोझ इतना वजनी था कि उससे चला नहीं जा रहा था। उसने राह किनारे बोझ को उतार कर इधर–उधर किसी मोटिए (कुली) को ढूंढ रहा था ताकि उसके द्वारा बोझ को ढुलवाया जा सके। तभी उधर एक पहरेदार आ धमका। उसने गोपाल को धमकाते हुए पूछा, ''इसमें क्या है?'' गोपाल ने सकुचाते हुए जवाब दिया कि उसमें मालिश वाली तेल की बोतलें हैं।

यहाँ हम यह बता दें कि गोपाल अधिकांश आम आदमी की वेषभूषा में ही चलता–फिरता था ताकि लोग उसे पहचान नहीं पाएँ। जब कभी भी वह पहचान लिया जाता, लोग उसे घेरकर तरह–तरह के प्रश्न करते। इससे वह छुटकारा पाना चाहता था। पहरेदार ने भी उसे नहीं पहचाना। ''झूठ बोलता है? ये शराब की बोतलें हैं। तुम्हें यह पता नहीं है कि इस राज्य में शराब का व्यापार करना गैरकानूनी है?'' पहरेदार ने धमकाया। इस पर गोपाल कुछ ऐसी गोल–मोल बातें करने लगा जिससे उसे यह विश्वास हो गया कि कुछ तो गड़बड़ी है। उधर गोपाल भी हाथ–पाँव जोड़ने की नौटंकी करने लगा। तब पहरेदार ने यह सोचा कि यही अवसर है कि वह रंगों हाथों अपराधी को पकड़कर महाराज के सामने उपस्थित कर दे तो उसे अवश्य पुरस्कार मिलेगा। साथ ही तकदीर ने साथ दिया तो प्रगति भी होगी। उसने गोपाल को बोझ उठाकर अपने पीछे–पीछे चलने को कहा।

''मुझसे इस बोझ को उठाकर चला नहीं जाता। इसलिए किसी मोटिए (कुली) को ढूंढ रहा था। देखता हूँ वह मिल जाता है या नहीं।'' गोपाल ने गिड़गिड़ा कर कहा। ''मोटेमल कहीं के! गैरकानूनी कमाई करते हो। कैसे चल पाओगे?'' इतना कहकर पहरेदार स्वयं ही बोझ उठाकर चलने लगा। गोपाल भी उसके पीछे–पीछे हो लिया। राजमहल तक पहुँचने से

पहले वह दूसरी ओर मुड़ गया और गोपाल से रिश्वत माँगते हुए कहा कि– ''मुझे प्रसन्न कर दो। मैं तुम्हें छोड़ दूँगा।''

इस बात पर गोपाल ने आनाकानी की तो उसने क्रोध से भरकर बोझ को कंधे से उतार दिया। गोपाल ने भी हाथ ऊपर कर दिया। उसने कहा– ''मेरे पास देने को एक फूटी कौड़ी भी नहीं है।'' सिपाही ने इस बात पर आग बबूला होकर कहा– ''तुमने तो मुझे थका दिया है। मैं तुम्हें छोड़ूँगा नहीं। चलो महाराज के पास।'' अब दूसरा कोई चारा न था। इसलिए पहरेदार फिर से बोझ उठाकर महल की ओर चलने लगा। महाराज के सामने पहरेदार ने सब कुछ बता दिया। तब महाराज ने गोपाल से पूछा, ''क्या बात हो गई भई?'' अब तक पहरेदार ने गोपाल को पहचान लिया था। जब गोपाल ने महाराज को सारा प्रसंग कह सुनाया तो पहरेदार को काटो तो खून नहीं जैसी स्थिति हो गई।

– कूचबिहार (पश्चिम बंगाल)

प्रसंग– गांधी जयंती पर विशेष

प्रार्थना का समय

आंध्र प्रदेश में चिकाकोल अपनी महीन खादी के लिए सारे भारत में प्रसिद्ध है। एक बार यात्रा करते–करते गाँधीजी जब वहाँ पहुँचे तो रात हो आई थी। स्थानीय लोगों ने उनके लिए कताई दंगल की व्यवस्था की थी और उस दंगल में अच्छी–अच्छी कत्तिनें भाग लेने आई थीं। गाँधीजी खादी प्रचार के लिए यह यात्रा कर रहे थे। उनके दल में काका कालेलकर और महादेव देसाई भी थे। दिन रात मोटर में यात्रा करते–करते वे थक गये थे। इसलिए उन्होंने इस दंगल में बैठना उचित नहीं समझा और जाकर सो गये। लेकिन गाँधीजी को तो उस दंगल में जाना ही था।

उन्हें कब छुट्टी मिली, वह कब सोये, किसी को कुछ पता नहीं चला। सवेरे चार बजे सब लोग प्रार्थना के लिए उठे तब गाँधीजी ने उनसे पूछा– ''रात को सोने से पहले क्या तुम लोगों ने प्रार्थना की थी?''

काका साहेब ने उत्तर दिया– ''जब आया तो इतना थक गया कि सो गया। प्रार्थना का स्मरण ही नहीं रहा।'' महादेव भाई बोले– ''मैं भी थक गया था, किन्तु आँख लगने से पहले मुझे स्मरण हो आया। तब बिस्तर पर बैठकर ही मैंने प्रार्थना कर ली।''

गाँधीजी ने कहा– ''मैं तो घंटा डेढ़ घंटा दंगल में बैठा। वहाँ से लौटा तो इतना थक गया था कि प्रार्थना

करना भूल गया। दो–ढाई बजे नींद खुली तो याद आया। तब ऐसा आघात लगा कि सारा शरीर काँपने लगा। पसीने से तर हो गया। उठकर बैठा। खूब पश्चाताप किया। जिसकी कृपा से मैं जीता हूँ, अपने जीवन की साधना करता हूँ, उस भगवान को ही भूल गया। इतनी बड़ी गलती हो गई। मैंने भगवान से क्षमा माँगी, लेकिन तब से नींद नहीं आई। ऐसे ही बैठा हूँ।''

प्रार्थना के बाद उन्होंने फिर कहा– ''यात्रा में भी शाम की प्रार्थना हमें नियत समय पर करनी चाहिए। सारे दिन का कार्यक्रम पूरा करके सोने से पहले जब अवसर मिलता है, तभी हम प्रार्थना करते हैं। यही गलती है। आज से शाम के सात बजे प्रार्थना होगी, हम कहीं भी क्यों न हों।''

उसके बाद सात बजे वह जहाँ भी होते, बस्ती में, जंगल में, मोटर रोककर प्रार्थना करते थे।

दोहे

दीपों का त्यौहार

– राजेन्द्र निशेश

दीपक लड़ता तिमिर से, यह उसकी पहचान,
लड़ना उससे सीख लो, मिट जाते व्यवधान।

अँधियारा कितना घना, नहीं ठहरता पास,
जीत हमारी अटल है, मन में हो विश्वास।

दीवाली पर सज रही, दीपों की बारात,
हँसी-खुशी की मिल रही, सब को लो सौगात।

धूम-धड़ाके हो रहे, हँसते खूब अनार,
रंग दिखाने को खड़ी, फूलझड़ी तैयार।

ऊँच-नीच का भेद सब, मिट जाये इस बार,
यही सीख बस दे रहा, दीपों का त्यौहार!

– चण्डीगढ़

छः अँगुल मुस्कान

एक बोर करने वाले प्रवक्ता ने अपने लम्बे भाषण के दौरान रुककर कहा– ''किसी को कुछ पूछना तो नहीं?''

''आपकी घड़ी में क्या बजा है?'' श्रोताओं में से आवाज आई।

*****

रेलवे प्लेटफॉर्म पर काफी भीड़ थी। गाड़ी के एक आरक्षित डिब्बे में एक वृद्ध घुसने लगा था कि एक युवक ने यह कहकर उसे चढ़ने से मना किया कि यह डिब्बा रिजर्व है। इस पर भी वह वृद्ध तेजी से डिब्बे में चढ़कर अंदर चला गया। इस पर वह युवक तेजी से उसकी ओर लपका और बोला– ''ओ बाबा, सीधी तरह उतर जाओ। वरना अभी एक हाथ में तुम्हारी बत्तीसी निकाल दूँगा।''

''बेटा! तुम्हें इतना कष्ट करने की आवश्यकता नहीं?'' कहकर वृद्ध ने अपने नकली दाँतों का सेट उतारा और आगे कहा– ''यह लो मेरी बत्तीसी।''

*****

शिक्षक– नेताजी! बेटा फेल हो गया है और आप लड्डू खिला रहे हैं?

नेताजी– ७० लड़कों की कक्षा में ६० फेल हैं, बहुमत तो मेरे लड़के के साथ है।

*****

परीक्षा के समय **अध्यापिका** (पप्पू से)– तुम इतने परेशान क्यों हो? पप्पू ने कोई उत्तर नहीं दिया।

अध्यापिका– क्या हुआ? क्या तुम अपना पैन भूल आये हो? पप्पू फिर चुप रहा। अध्यापिका ने फिर पूछा– क्या हुआ रोल नंबर भूल गए हो? पप्पू इस बार भी चुप।

अध्यापिका–क्या हुआ? कुछ तो बताओ! क्या भूल गए?

पप्पू– अरे! चुप करो मेरी माँ! यहाँ मैं पर्ची गलत ले आया हूँ और तुम्हें पेन–पेंसिल और रोल नंबर की पड़ी है।

निराली दीवाली

– डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल

प्रेरक और प्रणेता सगे भाई–बहन थे। दोनों एक–दूसरे से खूब प्यार करते थे। प्रेरक बारह वर्ष का था और प्रणेता दस वर्ष की थी।

वे शहर में अपने माँ–पिताजी के पास ही रहते थे। जबकि उनके दादा–दादी गाँव में अपने पैतृक मकान में निवास करते थे। उन्हें गाँव से शुरू से लगाव था। प्रेरक और प्रणेता का जब भी मन होता, दोनों अपने पिताजी के साथ जाकर दादा–दादी से मिल आते थे।

प्रेरक और प्रणेता को दीवाली का त्यौहार अत्यंत प्रिय था। हर बार वे इसे कुछ नए अंदाज में मनाया करते थे। संध्या का समय था। प्रेरक और प्रणेता बैठक कक्ष में बैठे हुए थे। तभी प्रेरक ने प्रणेता से कहा– ''दीवाली का त्यौहार आने में केवल सप्ताह भर शेष है।''

''तो ?'' प्रणेता ने मुसकाते हुए कहा।

प्रेरक बोला– ''तुम्हें याद है न पिछली दीवाली पर हम दादाजी के पास गाँव में गए थे। दादाजी हमारे लिए चकरी, फुलझड़ी, बम, अनार, रॉकेट और बहुत सारे पटाखे लेकर आए थे।''

''हाँ! सीटी भी तो लाए थे दादाजी!'' प्रणेता ने कहा।

''वाह! तुम्हें तो सब कुछ याद है। मानो कल की ही बात हो।'' प्रेरक ने बात आगे बढ़ाई।

''और फिर हमने ऐसी मस्ती की थी कि पूछो मत भैया! दीनू काका ने तो जब हमारे बम में आग लगाई थी तो बम उछलकर चुनमुन चाची के घर की छत पर जा गिरा था। और हाँ, सीटी फुस्स होकर रह गयी थी। अनार ऊँचे आसमान में अपने रंग–बिखेरने लगा तो रॉकेट ऊँचे उठ गया था। सचमुच खुशी व उल्लास का मेला–सा लग गया था।'' प्रणेता बोली।

''शाम को दादी ने हमारे लिए मिठाइयाँ भी बनवाई थीं– बर्फी, रबड़ी, मिल्क केक और पेड़े।'' बताते हुए प्रेरक के मुँह में पानी भर आया।

''जब दीवाली का उल्लेख चल ही पड़ा है तो दो वर्ष पहले मनाई गयी दीवाली की यादें भी तो ताजा कर ली जाएँ?'' प्रणेता कह उठी।

प्रेरक ने कहा– ''हाँ! उस बार हम नानाजी के पास दिल्ली गए थे। नानाजी भी तो हमारे लिए पटाखे लेकर आए थे।

लेकिन शहर में आतिशबाजी से प्रदूषण अधिक बढ़ जाता है। इसलिए वे फुलझड़ियाँ, साँप, अनार तथा प्रदूषण न फैलाने वाले पटाखे ही लाए थे। सच, वहाँ भी खूब आनन्द आया था। रात को प्रकाश की लड़ियों से पूरा घर जगमगा उठा था।''

''और हमारी मनपसंद मिठाइयाँ भी तो नानाजी ने बनवाकर रखी थीं जिन्हें हमने नानी, नाना, मामी और मामा के साथ मिल-बाँटकर खाई थीं।'' प्रणेता ने अपने भैया से कहा।

''वाह! ये दोनों वर्ष खूब आनन्द से हमने दीवाली का त्यौहार मनाया। लेकिन इस बार?'' कहते-कहते प्रेरक गंभीर हो चला था।

''हाँ! इस बार दीवाली का त्यौहार कहाँ मनाएँ हम? जरा सोचना पड़ेगा मुझे!'' प्रणेता गंभीर होकर धीमे स्वर में बोली।

''जल्दी सोचो प्रणेता?'' प्रेरक उतावला-सा हो गया था।

प्रणेता ने चुप्पी तोड़ी- ''मेरी एक सहेली है नीलू। वह बस स्टैंड के पास झुग्गी-झोपड़ियों में रहती है क्योंकि उसके माँ-पिताजी बहुत गरीब हैं। वहाँ उसके जैसे और भी तमाम बच्चे हैं। क्यों न हम

चलकर उनके साथ दीवाली का त्यौहार मनाएँ। इससे उन बच्चों को भी प्रसन्नता होगी और हमारा आनन्द भी दो गुना हो जाएगा।

माँ रसोई में दोनों की बातें सुन रही थीं। प्रणेता की अर्थपूर्ण बातें सुनकर उनसे रहा नहीं गया। वे तुरंत बैठक में आ गयीं। प्रणेता की पीठ थपथपाते हुए उन्होंने प्रणेता की बात का समर्थन किया।

फिर बोलीं- ''संध्या को मैं तुम्हारे पिताजी को भी यह जानकारी दे दूँगी। वे भी तुम्हें मना नहीं करेंगे। वो कहते हैं न 'जहाँ चाह, वहाँ राह।' तुम्हारे इस निर्णय से मैं गदगद हूँ।''

संध्या को कार्यालय से जब पिताजी घर पर आए, उनके सामने यह प्रस्ताव रखा गया। वे भी खुशी से उछल पड़े सुनकर। बोले- ''हमारे बच्चे तो वाकई समझदार हो गए हैं।''

दीवाली के एक दिन पहले पिताजी ढेर पटाखे और बच्चों के लिए मिठाइयाँ ले आए थे। प्रेरक और प्रणेता का सपना सच होने वाला था।

आज दीवाली का जगमगाता हुआ त्यौहार था। प्रणेता ने अपनी सहेली नीलू को बता दिया था कि वे शाम को आएँगे और मिलकर दीवाली का त्यौहार मनाएँगे।

शाम को प्रेरक और प्रणेता चल दिए नीलू के घर की ओर। प्रेरक के हाथों में पटाखे थे और प्रणेता के हाथों में मिठाइयाँ।

गरीब बस्ती में रोशनी का जमघट लग गया था। तीस से भी अधिक बच्चे अनार, फुलझड़ी, बम, चकरी आदि आतिशबाजी का झूम-झूमकर आनंद ले रहे थे। घंटे भर के बाद बच्चों को मिठाई भी मिली तो वे बल्लियों उछल पड़े।

बच्चों की माँएँ भी फूली नहीं समा रही थीं। सभी के मुँह से ये शब्द निकल पड़े- ''ऐसी निराली दीवाली पहली बार आई है।''

- गुरुग्राम (हरियाणा)

पुस्तक परिचय

दीनदयाल शर्मा की चुनिंदा बाल पहेलियाँ

मूल्य- १५०/-

श्री. दीनदयाल शर्मा जी बाल साहित्य जगत के वरिष्ठ वरेण्य रचनाकार हैं। विविध विधाओं में अपार सर्जन करने वाली आपकी लेखनी ने इस बार आपके लिए रची हैं मनोरंजक बौद्धिक व्यायाम कराती बाल पहेलियाँ।

प्रकाशक- नवकिरण प्रकाशन, बिस्सों का चौक, बीकानेर (राजस्थान)

दीनदयाल शर्मा की चुनिंदा बाल कहानियाँ

मूल्य- १५०/-

श्री. दीनदयाल शर्मा जी बाल मन के कुशल चितेरे कहानीकार हैं। प्रस्तुत पुस्तक में आपकी ऐसी दस बाल कहानियाँ हैं जो केवल मनोरंजन नहीं कराती आपको कुछ सोचने पर भी प्रेरित करती हैं।

प्रकाशक- नवकिरण प्रकाशन, बिस्सों का चौक, बीकानेर (राजस्थान)

बच्चों के प्रेरक बापू

मूल्य- २५०/-

वरिष्ठ लेखक एवं संपादक **श्री. उमेशकुमार चौरसिया** जी की संपादकीय दृष्टि व प्रतिभा का परिचय देती महात्मा गाँधी जी के जीवन के अनेक प्रेरक प्रसंगों को समेटे यह कृति निश्चय ही एक संग्रहणीय पुस्तक है।

प्रकाशक- अरावली प्रकाशन, सी-३७, आदर्श नगर, राजापार्क, जयपुर (राजस्थान)

एक बया और उसका घर

मूल्य- २००/-

बाल कविता की रचना एक विशिष्ट साधना है जिसमें बालमन धारण कर ही कुछ ऐसा रचा जा सकता है जो बच्चों को लुभाए। **श्री. जितेन्द्र निर्मोही** जी की सधी हुई लेखनी ने आप बच्चों को लुभाने वाली ऐसी ही ७४ बाल कविताएँ सँजोई है इस पुस्तक में।

संयुक्त प्रकाशक- साहित्यागार धामाजी मार्केट वाली गली, चौड़ा रास्ता, एवं पं. जवाहर लाल नेहरू साहित्य अकादमी, १५ अकादमी संकुल, झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, झालाना डूंगरी, जवाहरलाल नेहरू मार्ग, जयपुर राज.

कविता की गुल्लक

मूल्य- १९९/-

गुल्लक शब्द ही अपने आप में बचपन की स्मृति कराता है। जिसमें छुपा खजाना जिसे हम अपनी इच्छा से उपयोग कर सकते हैं। इस पुस्तक में विद्वान बाल साहित्यकार **डॉ. वेदप्रकाश अग्निहोत्री** जी ने ३३ बाल कविताओं का खजाना आपसे बाँटने का उपक्रम किया है।

प्रकाशक- श्वेतवर्णा प्रकाशन, २१२-ए, एक्सप्रेस व्यू अपार्टमेंट, सुपर एमआयजी, सेक्टर-९३, नोएडा (उ. प्र.)

मैं संघ हूँ

– नारायण चौहान

मैं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ हूँ। अनेक लोग मुझे आर. एस. एस. के नाम से जानते हैं। एक संगठन जिसकी नींव सौ वर्षों पहले २७ सितम्बर १९२५ को विजयादशमी के पावन पर्व पर रखी गई थी। मेरे जन्मदाता डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार थे। मैं आपके सामने अपनी आत्मकथा प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मेरे जन्म के समय भारत के सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य में कई समस्याएँ थीं। देश में ब्रिटिश शासन था। सामाजिक विषमताएँ बढ़ रही थीं। सांस्कृतिक परंपराओं का क्षरण हो रहा था। डॉ. हेडगेवार ने अनुभव किया कि भारत को अपने सांस्कृतिक और राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति जागरूक करने के लिए एक संगठित और अनुशासित संगठन की आवश्यकता है। उन्होंने एक ऐसे संगठन की कल्पना की, जो केवल देशभक्ति और सांस्कृतिक पुनरुत्थान का कार्य करें। समाज में एकता और सद्भाव भी स्थापित करे। उनके इसी विचार ने मुझे जन्म दिया।

मैं एक स्वयंसेवी संगठन हूँ। जिसमें विभिन्न आयु, जाति और वर्ग के लोग जुड़ते गए। मेरी कार्यप्रणाली शाखा प्रणाली पर आधारित है। शाखाओं में प्रतिदिन विभिन्न शारीरिक और मानसिक अभ्यास किए जाते हैं। जैसे योग, व्यायाम, बौद्धिक चर्चाएँ और संस्कार शिक्षण। यह शाखाएँ मेरे कार्यकर्त्ताओं के लिए एक दैनिक प्रशिक्षण केंद्र के रूप में काम करती हैं। जहाँ वे समाज सेवा, अनुशासन और निस्वार्थ सेवा के गुण सीखते हैं।

उद्देश्य एकमात्र यही है कि इस हिन्दुस्थान की इस पवित्र भूमि की उसकी संतानें बनकर सब प्रकार की सेवा करना। मैं चाहता हूँ कि भारतीय अपनी समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर पर गर्व करें और उसे संरक्षित रखें।

राष्ट्रीय एकता– विभिन्न जातियों, पंथों और भाषाओं के भारतीय समाज में एकता स्थापित करना मेरा उद्देश्य है। मैं हमेशा से एक ऐसे सुदृढ़ और अखण्ड भारत का सपना देखता हूँ, जहाँ सभी नागरिक एक–दूसरे के साथ समरसता और सहयोग से रहें।

सेवा कार्य– प्राकृतिक आपदाओं या सामाजिक समस्याओं के समय, मैंने हमेशा सेवा कार्य में बढ़–चढ़कर भाग लिया है। चाहे वह बाढ़, भूकंप या महामारी हो, मेरे स्वयंसेवक अपनी प्रसिद्धि की कामना से दूर अग्रणी भूमिका निभाते हैं।

आज, मेरे करोड़ों सदस्य हैं और मैं पूरे भारत में कार्यरत हूँ। मेरी शाखाएँ गाँव–गाँव और नगर–नगर में फैली हुई हैं। मेरे कार्यकर्त्ता समाज के हर क्षेत्र में सक्रिय हैं और निस्वार्थ सेवा के माध्यम से समाज को सशक्त बना रहे है। मैं हमेशा समाज के निर्बल वर्गों के उत्थान पर बल देता हूँ।

मैं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अर्थात् 'संपूर्ण विश्व एक परिवार है' के दर्शन में विश्वास करता हूँ। मेरा उद्देश्य केवल समाज और राष्ट्र की सेवा करना है और कुछ नहीं।

मैं एक स्वदेश भक्त संगठन के रूप में समाज की सेवा और राष्ट्रीय पुनरुत्थान के लिए प्रतिबद्ध हूँ। मैं अपने स्वयंसेवकों के माध्यम से एक सशक्त, समृद्ध और अखण्ड भारत के निर्माण में निरंतर संलग्न हूँ।

अभी के लिए इतना ही अगले अंक में मैं कुछ और बातें बताऊँगा आपके लिए।

– इन्दौर (म. प्र.)

इन्द्रप्रस्थ का निर्माण

– मोहनलाल जोशी

युधिष्ठिर खाण्डवप्रस्थ के राजा बन गये। वे माता कुन्ती और पत्नी द्रौपदी के साथ खाण्डवप्रस्थ आये। भगवान कृष्ण भी उनके साथ थे।

खाण्डवप्रस्थ की जमीन बहुत ऊबड़-खाबड़ थी। वहाँ कोई मनुष्य नहीं रहता था। बड़े-बड़े पहाड़ और जंगल थे।

श्रीकृष्ण ने देवराज इन्द्र को बुलाया। श्रीकृष्ण ने इन्द्र को कहा- ''यहाँ विशाल और सुंदर नगर बनवाओ।'' इन्द्र ने देवताओं के भवन निर्माता विश्वकर्मा को आदेश दिया। विश्वकर्मा ने शीघ्र ही विशाल नगर बना दिया। उसका नाम इन्द्रप्रस्थ रखा।

इन्द्रप्रस्थ में बहुत चौड़े रास्ते थे। अनेक उद्यान थे। राजमहल बहुत सुन्दर था। बड़ी-बड़ी यज्ञ शालाएँ थीं। राजा युधिष्ठिर ने इन्द्रप्रस्थ में प्रवेश किया। वहाँ अनेक व्यापारी, कृषक, सैनिक आदि प्रजा सुख से रहने लगी।

युधिष्ठिर की कीर्ति और नारदजी का उपदेश

युधिष्ठिर धर्म से प्रजा का पालन करते थे। वे प्रजा से पुत्रवत प्रेम करते थे। उनके राज्य में प्रजा बहुत सुखी थी। धृतराष्ट्र से आधा राज्य पाकर पाण्डव भी प्रसन्न थे।

एक दिन देवर्षि नारद आये। युधिष्ठिर ने उनके चरण पखारे। नारदजी की पूजा-अर्चना की। नारदजी को एक ऊँचा आसन प्रदान किया। सभी पाण्डव उन्हें घेर कर बैठ गये।

नारदजी ने कहा- ''तुम सभी भाई सदा प्रेम से रहो। तुम्हारे में आपस में फूट नहीं होनी चाहिये। द्रौपदी के संबंध में निश्चित नियम बनाओ। सभी भाई उसका पालन करो। प्रेम से नहीं रहोगे तो सुन्द-उपसुन्द की तरह नष्ट हो जाओगे।''

पाण्डवों ने नारदजी के उपदेशों को निभाने का वचन लिया।

– बाड़मेर (राजस्थान)

चित्रकथा-

दुर्घटना

-संकेत

गाँव में अचानक दुर्घटना हो गई-

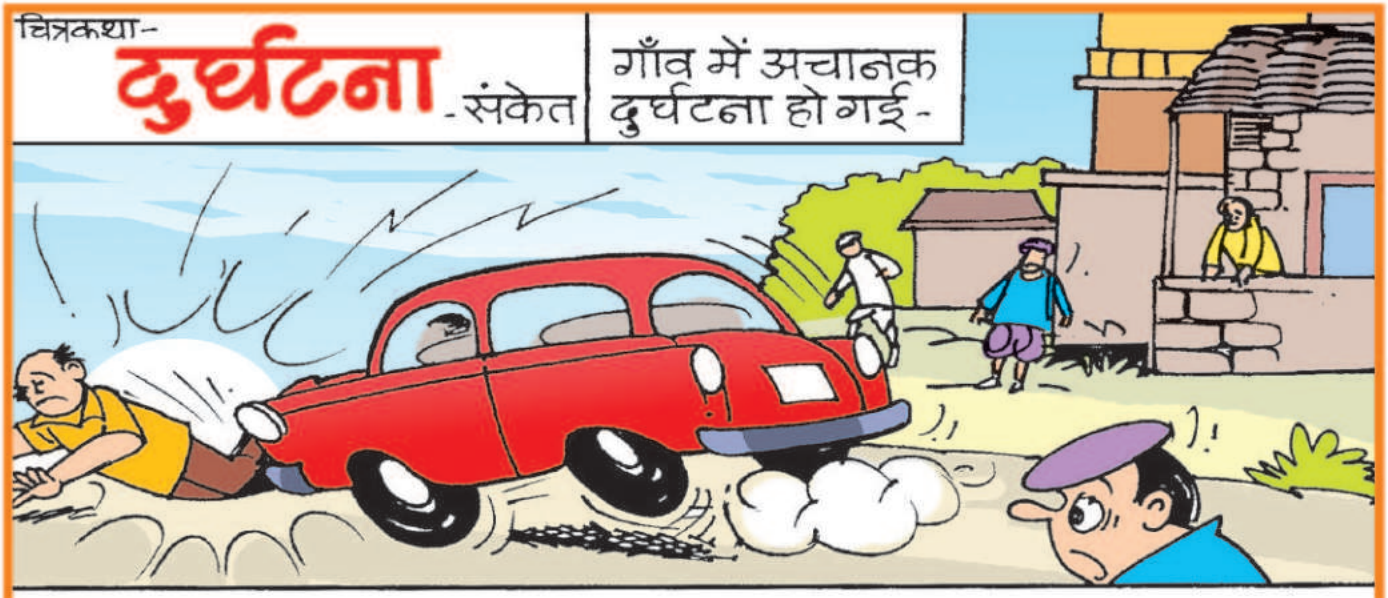

..ओह! यह तो मेरी कार से टकराकर जख्मी हो गया है...

वहाँ भीड़ लग गई-

देखिए मैं यहाँ नया हूँ, यहाँ भीड़ लगाने की बजाए...

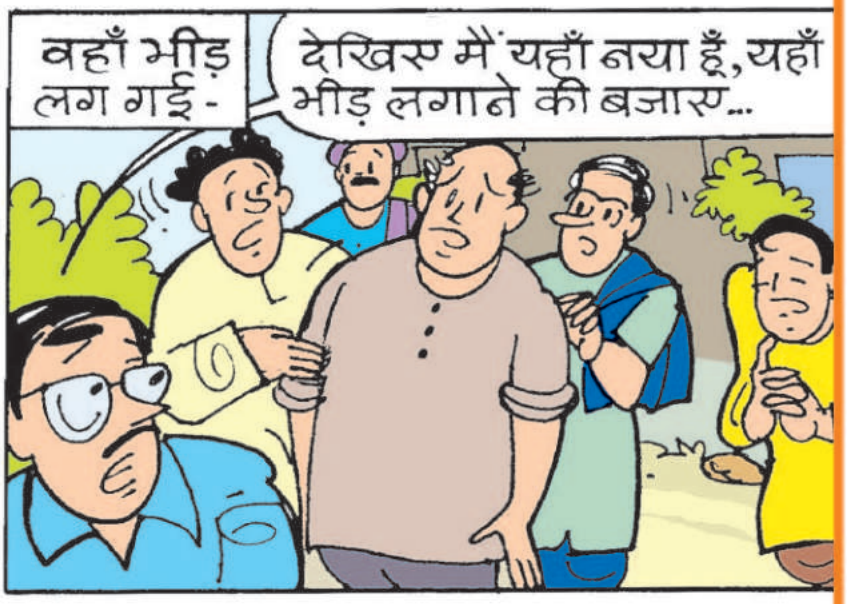

आप लोग दौड़कर किसी डाक्टर को बुला दीजिए..यह आदमी बेहोश है..

..बाबू इस गाँव में एक ही डॉक्टर है, बस ये खुद..

चार मित्र

– प्रा. आनंद प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश'

पात्र परिचय

सुमित– १२ वर्ष, हर्ष– १४ वर्ष,
राजेश– १४ वर्ष, चंदू– १३ वर्ष।
चंद्रभान– ४५ वर्ष (सुमित के पिताजी)।
कालू कुम्हार– ४० वर्ष।
रानी– कालू की पत्नी ३५ वर्ष।

(गाँव के बगल में स्थित खेल के मैदान में चार मित्र पसीना बहाकर घर की ओर जब वापस लौटते हैं तो गाँव से अलग उन्हें एक छप्पर–सा मकान दिखाई पड़ता है। उसे देखकर चारों मित्र आपस में वार्तालाप करते हैं)

सुमित– भाई हर्ष! उस मकान को देखो। यह तो हमारे गाँव में बिल्कुल अलग–सा मकान दिखाई देता है। एक ही गाँव में सारे मकान पक्के बने हुए हैं। यह छप्परवाला मकान अलग क्यों है?

हर्ष– आश्चर्य! घोर आश्चर्य! सचमुच एक गाँव में ऐसा अंतर क्यों? इस पर तो हम लोगों ने कभी ध्यान ही नहीं दिया? हम तो बच्चे हैं पर हमारे बड़ों को तो ध्यान देना चाहिए था।

राजेश– मित्र हर्ष! तुम ठीक कह रहे हो जब हम बच्चे इस अलग मकान को देख सकते हैं तो बड़ों को यह क्यों नहीं दिखाई पड़ता है?

चंदू– मुझे तो गाँव का सबसे गरीब परिवार लगता है। इसके पास पक्का मकान बनाने के लिए पैसा नहीं होगा। तभी तो इस स्थिति में रह रहा है।

सुमित– मित्र चंदू! तुम ठीक कह रहे हो। हमें चलकर इस परिवार को बहुत निकटता से देखना चाहिए और जितनी सहायता इनकी हो सकती है हमें करना चाहिए।

(चारों मित्र जब वहाँ पहुँचते हैं तो देखते हैं कि गंदे कपड़े पहने हुए दो लोग मिट्टी का कुछ काम कर रहे होते हैं।)

चारों मित्र एक साथ– आप लोगों का परिचय क्या है? यह आप क्या कर रहे हैं?

कालू– मैं कालू कुम्हार हूँ और यह मेरी पत्नी रानी है। हमारा व्यवसाय मिट्टी के बर्तन बनाना और उन्हें बेचना है। इसी से हमारी रोजी–रोटी चलती है।

रानी– बच्चो! हम दोनों मिट्टी के दीए बना रहे हैं। दीपावली निकट है, तुम सबको पता होगा। इस त्यौहार पर हम कुछ कमाई कर लेते हैं और उसी से हम अपना पेट पालते हैं।

सुमित– जब आप कमाई करते हैं तो यह अपना पक्का मकान क्यों नहीं बनाते हैं? गाँव वालों से बिल्कुल अलग रहते हुए आपको कभी अनुभव नहीं होता है?

कालू– खूब अनुभव होता है किन्तु करें क्या?

पापी पेट का सवाल है। पहले पेट भरूँ या मकान बनाऊँ? अब तो कुछ विशेष कमाई भी नहीं होती है। जब से बाजार में तरह–तरह की मोमबत्ती एवं भाँति–भाँति के मोम के दिए आने लगे हैं तब से हमारा यह व्यवसाय भी बहुत मंदा हो गया है।

रानी– पहले गर्मियों में हम खूब घड़े बनाते थे जिसका उपयोग गाँव वाले ठंडे पानी के लिए किया करते थे। जब से यह फ्रिजवा आ गया है तब से हमारा यह घड़ा भी बनना बहुत कम हो गया है। अब तो हमें खाने के भी लाले पड़ गये हैं।

सुमित– फ्रिजवा नहीं! वह फ्रिज है।

कालू– हाँ–हाँ वही, हम क्या जाने। हमने तो कभी देखा भी नहीं है। जो सुना था सो बता दिया।

सुमित– ठीक है। कोई बात नहीं। अब हम आपकी सहायता करेंगे। क्यों भाई करेंगे न?

चारों एक साथ– हाँ करेंगे, अवश्य सहायता करेंगे। हमारे गाँव में एक परिवार अलग–थलग है, यह हमारे समझ से परे है। अत: हम सब मिलकर इसे ठीक करेंगे।

(यह कहकर चारों मित्र वहाँ से अपने–अपने घर चल देते हैं।)

सुमित– पिताजी! आज मैं अपने मित्रों के साथ खेलकर जब घर आ रहा था तो हमें गाँव से अलग एक छप्पर वाला घर दिखाई पड़ा और हम लोग वहाँ गए तो पता लगा कि यहाँ कालू कुम्हार अपने परिवार के साथ रहता है। पिताजी उनकी दयनीय स्थिति देखकर हमें बड़ा कष्ट हुआ। क्या उनकी इस स्थिति से गाँव वालों को कभी कोई कष्ट नहीं होता है?

चंद्रभान– बेटा सुमित! तुम लोग कालू के यहाँ गए थे। यह जानकर मुझे बहुत अच्छा लगा। उसकी गरीबी से तुम लोगों के अंदर संवेदना हुई यह जानकर और अच्छा लग रहा है।

सुमित– अच्छा लग रहा है, यह तो बहुत अच्छी बात है। किन्तु उससे अच्छी बात यह है कि पिताजी उसकी सहायता करने की आवश्यकता है। कैसे? कितना? और किस प्रकार की सहायता की जाए? यह हमारी समझ में अभी भी नहीं आ रहा है।

चंद्रभान– शाबाश मेरे लाल! मुझे तुम पर गर्व है। इस आयु में दूसरों की सहायता की आप सब की लालसा अच्छी लगी। जहाँ तक सहायता की बात है तुम लोग दो तरह से उसकी सहायता कर सकते हो। सेठ रामनाथ से मिलकर उसके घर बनवाने की सहायता कर सकते हो तो दीपावली में उसके मिट्टी के दीए के कारोबार को बढ़ाने में सहायता कर सकते हो।

सुमित– धन्यवाद पिताजी! आपने हमारा काम सरल कर दिया। अब हम कालू को गाँव की मुख्य धारा से जोड़ कर रहेंगे।

(दूसरे दिन चारों साथी रामनाथ से मिलकर कालू कुम्हार की गरीबी का वर्णन करते हैं और उसके बनवाने के लिए सेठ रामनाथ जी से चर्चा करते हैं और उनसे सकारात्मक स्वीकृति प्राप्त कर लेते हैं। इसके

बाद चारों मित्र ग्राम प्रधान के पास जाते हैं।)

सुमित– प्रधान जी! आप कालू कुम्हार को जानते ही होंगे। वह हमारे गाँव का सबसे गरीब परिवार है। आज भी जब हमारे गाँव में सबके मकान पक्के हो गए हैं तब भी वह छपरे में रहता है। संभवत आपका ध्यान उधर कभी गया नहीं होगा।

प्रधान जी– हाँ कालू कुम्हार सज्जन मनुष्य है। उसके मकान के लिए मैं प्रधानमंत्री आवास योजना के अंतर्गत अब आवेदन दूँगा तो थोड़े दिनों में उसका मकान बन जाएगा।

सुमित– प्रधान जी! आपसे बहुत विलम्ब हो गया है। यह तो पहले ही हो जाना चाहिए था। अब आपको आवेदन देने की आवश्यकता नहीं है। सेठ रामनाथ ने मकान बनाने की स्वीकृति दे दी है। उनको एक धन्यवाद पत्र दे सकते हैं।

हर्ष– प्रधान जी! इस बार दीपावली के अवसर पर आपकी हमें सहायता चाहिए हम लोग चाहते हैं कि इस बार गाँव में बाजार से कोई मोमबत्ती और दीया नहीं खरीदा जाए। आपकी बात सुनी जाएगी। अत: आप यह घोषणा करा दें कि इस बार कालू के मिट्टी के दीए से ही दीपावली मनाई जाएगी।

राजेश– हम लोग चाह रहे हैं कि गाँव से कुछ चंदा इकत्र कर कालू के घर एक दुकान भी खोल दी जाए जहाँ तेल और पटाखे भी उपलब्ध रहेंगे।

चंदू– उस दुकान में सजावट के भी सामान रहेंगे। जो अपने घर की सजावट करना चाहेंगे, वे वहाँ से सामान ले सकते हैं।

प्रधानजी (चारों बच्चों से)– मैं तुम लोगों की ग्राम सेवा से बहुत प्रसन्न हूँ। जो कार्य मुझे करना चाहिए था उसका बीड़ा तुम चारों ने उठाया है। इसके लिए मैं तुम्हारा आभारी हूँ और तुम्हारे इस कार्य में मैं पूरी सहायता करूँगा।

(चारों मित्रों के प्रयास से दीपावली पर इस बार केवल मिट्टी के दिए ही जलाए गए जिन्हें कालू कुम्हार से खरीदा गया और पटाखे और सजावट के सामान भी वहीं से लिए गए। दीपावली के दिन रात्रि के समय जब चारों मित्र घर से निकले तो देखा चारों ओर मिट्टी के दीए जगमग–जगमग कर रहे थे और वे जब कालू के घर गए तो वहाँ जलते हुए मिट्टी के दीए देखकर वे सभी अत्यंत प्रसन्न हुए।)

कालू (चारों मित्रों से)– आप लोग सही कहते हैं कि जब बच्चे ठान लेते हैं तो कठिन से कठिन समस्या का समाधान हो जाता है। आप बच्चों के प्रयास और अहसास से मेरा घर भी बनने लगा और मेरा मिट्टी का कारोबार भी खूब चल पड़ा। साथ ही साथ मेरी दुकान भी चल पड़ी है।

सुमित– यह तो आप लोगों के परिश्रम का परिणाम है। हम लोगों ने एक प्रयास किया और वह इसलिए सफल हुआ कि उसे आप लोगों ने जी–जान लगाकर संपादित किया।

कालू– आप सब बच्चों ने मेरी भरपूर सहायता की। इसके लिए मैं आप लोगों को कोई भेंट देना चाहता हूँ। (यह कहकर चारों मित्रों को कालू ने मिट्टी की बनी हुई लक्ष्मी और गणेश की मूर्ति भेंट की।)

चारों मित्र एक साथ– (मूर्ति वाले हाथ को ऊपर करते हुए) जय दीपोत्सव।

कालू– आज मैं इतना प्रसन्न हूँ कि मेरी प्रसन्नता शब्दों में उल्लिखित नहीं कर सकता।

रानी– ये चार बच्चे कितने अच्छे मुहूर्त में मेरे घर आए थे। हमारी दुर्दशा को न केवल इन्होंने अनुभव किया अपितु उसे दूर करने की ठान ली और हमें भी गाँव वालों के निकट लाकर खड़ा कर दिया। हे भगवान। इन चारों बच्चों की खूब उन्नति करना।

(पूरा गाँव मिट्टी के दीए के प्रकाश को देखकर बहुत प्रसन्न था और चारों मित्रों की प्रशंसा के पुल बाँध रहा था। अपनी प्रशंसा सुनकर चारों मित्र भविष्य में और अच्छा करने के लिए उत्साहित हो रहे थे।)

– लाडनूं (राजस्थान)

हमारे बाबा

हम बच्चों के प्यारे बाबा,
बस्ती भर में न्यारे बाबा।
हमको प्रात:काल जगाते,
उठ जाते भिनसारे बाबा।

भारतीयता के गुण गाते,
धोती-कुर्त्ता धारे बाबा।
अपने काम स्वयं करते हैं,
किसी के नहीं सहारे बाबा।

सब नन्हें-मुन्नों की टोली,
प्रेम से उन्हें पुकारे बाबा।
हर पल ध्यान सभी का रखते,
घर भर के उजियारे बाबा।

सच्चाई-अनुशासन प्रिय हैं,
हैं आदर्श हमारे बाबा।
कैसी भी आए कठिनाई,
कभी न हिम्मत हारे बाबा।

पौध लगाते, पानी देते,
हरियाली के तारे बाबा।
साफ-सफाई, श्रेष्ठ दवाई,
खूब लगाते नारे बाबा।

– गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'
लखनऊ (उ. प्र.)

देवपुत्र द्वारा आयोजित प्रतियोगिता एवं पुरस्कारों के लिए प्रविष्टियाँ आमंत्रित

सभी प्रतियोगिताओं के लिए सामान्य नियम

* एक प्रतियोगिता हेतु एक ही प्रविष्टि भेजें।
* प्रविष्टि पर प्रतियोगिता/पुरस्कार का नाम, अपना पूरा नाम पता एवं व्हाट्सएप नंबर अवश्य लिखें।
* रचनाएँ सुवाच्य अक्षरों में लिखी या कम्प्यूटर पर टाइप की गई हो।
* प्रविष्टि संपादक देवपुत्र– ४०, संवाद नगर, इन्दौर–४५२००१ (म. प्र.) पर डाक द्वारा या ईमेल– editordevputra@gmail.com पर (व्हाट्सएप पर नहीं) ३१ जनवरी २०२५ के पूर्व हमें अवश्य प्राप्त हो जाएँ।
* निर्णायकों का निर्णय अंतिम व सर्वमान्य होगा।
* पुस्तकों को छोड़कर सभी रचनाओं के प्रकाशन का अधिकार देवपुत्र के पास सुरक्षित रहेगा।
* कृपया रचनाओं के स्वरचित, स्वयं द्वारा अनूदित व मौलिक होने का स्वयं द्वारा प्रमाणित पत्र अवश्य भेजिए।

श्री भवालकर स्मृति कहानी प्रतियोगिता २०२४

'देवपुत्र' के पूर्व व्यवस्थापक स्व. श्री शांताराम शंकर भवालकर जी की पावन स्मृति में आयोजित यह प्रतियोगिता केवल बारहवीं कक्षा तक के बच्चों के लिए है। बच्चे अपने किसी भी मन पसंद विषय पर अपनी स्वयं की बनाई हुई 'बाल कहानी' इस प्रतियोगिता के लिए भेज सकते हैं। इस प्रतियोगिता हेतु पुरस्कार निम्न प्रकार से हैं–

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	प्रोत्साहन पुरस्कार (२)
१५००/–	११००/–	१०००/–	५००/–५००/–

मायाश्री राष्ट्रीय बाल साहित्य पुरस्कार २०२४

प्रसिद्ध बाल साहित्यकार स्व. डॉ. सरोजिनी कुलश्रेष्ठ की प्रेरणा से प्रायोजित यह पुरस्कार जनवरी २०२४ से दिसम्बर २०२४ के मध्य प्रकाशित **'हिन्दी बाल कविता की पुस्तक'** के लिए निश्चित किया गया है। पुरस्कार हेतु प्रविष्टि स्वरूप कोई भी रचनाकार अपनी 'बाल कविता' की प्रकाशित कृति की ३ प्रतियाँ प्रेषित करें। पुरस्कृत कृति के रचनाकार को प्रमाण–पत्र सहित ५०००/– पुरस्कार निधि प्रदान की जाएगी।

डॉ. परशुराम शुक्ल बाल साहित्य पुरस्कार २०२४

वरेण्य बाल साहित्य सर्जक डॉ. परशुराम शुक्ल द्वारा स्थापित इस पुरस्कार हेतु इस वर्ष **किसी भी भारतीय भाषा से हिंदी में अनुवाद की गई बाल कहानी** विषय के रूप में निश्चित की गई है। पुरस्कार अनुवादक को प्रदान किया जाएगा। मूल कहानी के साथ आपकी एक सर्वश्रेष्ठ अनूदित बाल कहानी प्रविष्टि स्वरूप आमंत्रित है। पुरस्कार हैं–

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	प्रोत्साहन पुरस्कार (२)
१५००/–	१२००/–	१०००/–	५००/–५००/–

केशर पूरन स्मृति पुरस्कार २०२४

वरिष्ठ साहित्यसेवी श्री रमेश गुप्ता द्वारा स्थापित केशर पूरन स्मृति पुरस्कार हेतु जनवरी २०२४ से दिसम्बर २०२४ के मध्य देवपुत्र के पुस्तक परिचय स्तंभ में प्रकाशित पुस्तकों में से २१००/– का पुरस्कार निर्णायकों द्वारा चयनित किसी एक सर्वश्रेष्ठ कृति को प्रदान किया जाएगा।

बाल पहेलियाँ

– डॉ. कमलेंद्र कुमार श्रीवास्तव
जालौन (उ. प्र.)

(१)
लोग कहें सब इसे डाकिया,
पर है प्यारा पक्षी।
अपना रास्ता कभी न भूले,
यही बात है अच्छी।।

(२)
मैं हूँ एक शिकारी पक्षी,
बहुत तेज है चाल।
बहुत तेज मैं उड़ता जाता,
यह है एक कमाल।।

(३)
पेड़ों पर मैं रहने वाली,
भूरा काला रंग।
चार अक्षर मेरे नाम में,
आते हैं हरदम।।

(४)
मैं पँछी हूँ एक अनोखा,
अजब है मेरे ढंग।
अपने घर को रोशन करता
जुगनुओं के संग।।

(५)
अजब निराला हूँ मैं पँछी,
मरे हुए को खाऊँ।
रेड डाटा बुक में नाम है मेरा,
बोलो क्या कहलाऊँ?

उत्तर- १) कबूतर, २) बाज, ३) गिलहरी,
४) बया पक्षी, ५) गिद्ध।

बोल अनमोल

संसार में ऐसा कोई मार्ग नहीं है जो केवल सुख की ओर ही जाता है। परन्तु सुख स्वयं ऐसा मार्ग है जो संसार में कहीं पर भी जा सकता है।

समाचार

'बच्चों का देश' का रजत जयंती समारोह

राजसमन्द। राजसमन्द स्थित अंतरराष्ट्रीय संस्थान अणुव्रत विश्वभारती द्वारा प्रकाशित मासिक बाल पत्रिका 'बच्चों का देश' का त्रिदिवसीय रजत जयंती समारोह १६ से १८ अगस्त तक संस्थान मुख्यालय 'चिल्ड्रन'स पीस पैलेस' में आयोजित हुआ। इस अवसर पर 'राष्ट्रीय बाल साहित्य समागम' में देशभर से लगभग ८५ बाल साहित्यकार सम्मिलित हुए।

रजत जयंती समारोह के उद्घाटन सत्र में अणुव्रत विश्वभारती सोसायटी (अणुविभा) के अध्यक्ष अविनाश नाहर ने अणुव्रत आचार संहिता का वाचन किया।

पत्रिका के संपादक संचय जैन ने देशभर से पधारे बाल साहित्यकारों का स्वागत किया।

त्रिदिवसीय आयोजनों में बाल साहित्य विषयक महत्वपूर्ण विषयों पर विभिन्न सत्रों में सार्थक विचार विमर्श हुआ। सत्रों की अध्यक्षता सर्वश्री रमेश दिविक, डॉ. सुरेन्द्र विक्रम, डॉ. परशुराम शुक्ल, समीर गांगुली, राजीव ताम्बे, डॉ. विमला भंडारी, गोविन्द शर्मा जैसे अनुभवी बाल साहित्यकारों ने की।

सत्रों में देशभर से पधारे वरिष्ठ बाल साहित्यकारों ने अपने विचारों से अवगत कराया। सत्र संचालन सर्वश्री मनोहर चमोली 'मनु' रजनीकांत शुक्ल, डॉ. चेतना उपाध्याय, अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन', उदय किरोला, अरविन्द कुमार साहू एवं नीलम राकेश ने किया। एंजिल गांधी की संगीतमय प्रस्तुति एवं बच्चों की मंचीय प्रस्तुतियाँ हृदय को छूने वाली थीं। सभी साहित्यकारों द्वारा विभिन्न विद्यालयों में जाकर सम्पन्न बच्चों के संवाद एक सार्थक पहल बनी।

आयोजन के प्रमुख आकर्षण चिल्ड्रन्स पीस पेलेस की बाल गतिविधियों के संचालन केन्द्र का दर्शन, बाल कवि सम्मेलन एवं विश्वप्रसिद्ध राजसमन्द झील के किनारे सामूहिक योग सत्र रहे।

सुरम्य परिसर एवं भावपूर्ण आतिथ्य ने सभी प्रतिभागियों का मन मोह लिया। आयोजन का विशिष्ट अनुभव अणुव्रत का परिचय प्राप्त करना रहा। समापन सत्र में विदुषी जैन साध्वियों का महत्वपूर्ण विचार पाथेय प्राप्त हुआ।

पत्रिका के सहसंपादक श्री प्रकाश तातेड़ के द्वारा धन्यवाद ज्ञापन के साथ सम्पन्न यह एक अविस्मरणीय आयोजन बन गया।

कविता

ज्योतिमयी हो दीवाली

– डॉ. रोहिताश्व अस्थाना, हरदोई (उ. प्र.)

खील खिलौने और बताशे–
लाई जगमग दीवाली।
श्री लक्ष्मी–गणेश पूजन को–
सजी हुई सुन्दर थाली।।

पटी हुई बाजार सलोनी,
बरतन और खिलौनों से।
राम बचाए यह खुशहाली,
घातक जादू–टोनों से।।

जगमग–जगमग दीप जल रहे–
बिखरी पड़ती उजियाली।
श्री लक्ष्मी–गणेश पूजन को–
सजी हुई सुन्दर थाली।।

धूम मची है फुलझड़ियों की–
चरखी और अनारों की।
फूट रहे हर और पटाखे–
शोभा यह बाजारों की।।

कन्दीलें भेजतीं गगन को–
हैं अपनी अनुपम लाली।
श्री लक्ष्मी–गणेश पूजन को–
सजी हुई सुन्दर थाली।।

अम्मा–बापू, दादा–दादी–
खुश हैं सब भाई–बहना।
मुफ्त बँट रहा चलो सँजोएँ–
आज ज्योतियों का गहना।।

मिटे अँधेरा भेदभाव का–
ज्योतिमयी हो दीवाली।
श्री लक्ष्मी–गणेश पूजन को–
सजी हुई सुन्दर थाली।।

डाक पंजीयन : एम.पी./आय.डी.सी./६२३/२०२४-२०२६ | आर.एन.आय. पं. क्रं. ३८५७७/८५
प्रकाशन तिथि २०/०९/२०२४ | प्रेषण तिथि ३०/०९/२०२४ | प्रेषण स्थल- आर.एम.एस., इन्दौर

जुलाई २०२२ के अंक से देवपुत्र का संशोधित मूल्य निम्नानुसार है।

एक अंक ३०/- वार्षिक सदस्यता २००/- १५ वर्षीय सदस्यता २०००/-

एक ही पते पर १० या अधिक अंक एक साथ मँगवाने पर वार्षिक शुल्क १५०/- प्रति अंक

कृपया शुल्क भेजते समय चेक/ड्राफ्ट पर केवल
'सरस्वती बाल कल्याण न्यास' लिखें।

बाल साहित्य और संस्कारों का अग्रदूत

सचित्र प्रेरक बाल मासिक
देवपुत्र सचित्र प्रेरक बहुरंगी बाल मासिक

स्वयं पढ़िए औरों को पढ़ाइये

उत्तम कागज पर श्रेष्ठ मुद्रण एवं आकर्षक साज-सज्जा के साथ

अवश्य देखें- वेबसाईट : www.devputra.com

स्वामी सरस्वती बाल कल्याण न्यास, इन्दौर, म. प्र. के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राकेश भावसार द्वारा अजीत प्रिन्टर्स एंड पब्लिशर्स, २०-२१, प्रेस कॉम्प्लेक्स, ए. बी. रोड, इन्दौर, म. प्र. से मुद्रित एवं ४०, संवाद नगर, नवलखा, इन्दौर, म. प्र. से प्रकाशित सम्पादक - गोपाल माहेश्वरी